



॥ ओ३म् ॥

वर्ष - ८

अंक - २

मूल्य - २५/-

हिन्दी
मासिक

वैदिक संसार

दिसम्बर
२०१८



मेरे पिता : पं. दुलिचन्द जी शर्मा (जांगिड)

१६वीं पुण्यतिथि पर शत-शत नमन, श्रद्धावनत : सुखदेव शर्मा एवं ढढोरिया परिवार



॥ ओ३म् परमात्मने नमः ॥

विश्वसनीय आयुर्वेदिक औषधियों एवं हवन सामग्री के निर्माता

प्रभात आयुर्वेदिक संस्थान, देवास

के भव्य शो रुम का शुभारम्भ 22 नवम्बर को आचार्य सत्यसिन्धु जी के ब्रह्मत्व में सम्पन्न



श्री प्रेमनारायण जी अपने परिजनों के साथ देवयज्ञ करते हुए



जिला आयुर्वेद अधिकारी के करकमलों द्वारा शो रुम का शुभारंभ करवाते हुए संस्थान प्रमुख प्रेमनारायण आर्य एवं उपस्थित गणमान्य महानुभाव

आर्य समाज मन्दिर मार्केट, दयानन्द चौक, देवास (म.प्र.)



आ. सत्यसिन्धु जी, होशंगाबाद प्रसन्नता के क्षण : स्नेहीजन, परिजन एवं सम्मानित गणमान्य महानुभाव



आचार्य श्री आशीर्वाद एवं उपदेश प्रदान करते हुए



आ. श्री का सम्मान, साथ में बड़े भ्राता श्री बालचन्द्र जी



श्रीमती ममता जोनवाल आयुर्वेद अधिकारी द्वारा माल्यापर्ण



श्री देवप्रकाश जी सेन व डॉ. प्रमोद जैन दीप प्रज्वलन करते हुए

औषधी निर्माण स्थल (फैक्ट्री): ४, कामना नगर, मील रोड़, महजधाम के पास, देवास (म.प्र.)

Mob.: 9926875022, 8109953410

Email : prabhataayurvedic12@gmail.com, Web: prabhataayurvedic.in

प्राणी मात्र के हितकारी वैदिक धर्म का सजग प्रहरी



वैदिक संसार

आरएनआई-एमपीएचआईएन २०१२/४५०६९
डाक पंजीयन-एमपी/आई डी सी/२०१८-२०
वर्ष-८, अंक-०२
अवधि-मासिक, भाषा-हिन्दी
प्रकाशन आंग्ल दिनांक : २५ दिसम्बर, २०१८
आर्ष तिथि- पौष मास, कृष्ण पक्ष, तृतिया
सृष्टि सम्वत्-१,९७,२९,४९, १२०
शक सम्वत्- १९४०
विक्रम सम्वत्- २०७५, दयानन्दाब्द-१९५

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक
सुखदेव शर्मा, इन्दौर- ०९४२५०६९४९९
(सायं ६ बजे से प्रातः ८ बजे तक मौन काल)

सम्पादक
गजेश शास्त्री, इन्दौर (म.प्र.)

प्रकाशन स्थल एवं पत्र व्यवहार का पता
१२/३, संविद नगर, इन्दौर-१८, मध्यप्रदेश

वैदिक संसार का आर्थिक आधार

संरक्षक (१५ वर्ष)	२५०००/-
आजीवन सहयोग (१५ वर्ष)	२५००/-
पंचवार्षिक सहयोग	११००/-
त्रैवार्षिक सहयोग	७००/-
वार्षिक सहयोग	३००/-
एक प्रति	२५/-

अन्य सहयोग-स्वैच्छानुसार
बैंक खाता धारक - वैदिक संसार
भारतीय स्टेट बैंक, शाखा-ओल्ड पलासिया, इन्दौर
चालू खाता क्र. ३२८५९५९२४७९
आईएफएसएस कोड-एसबीआईएन-०००३४३२

अध्यात्म के विषय में व्याप्त अन्धकार को दूर करने एवं वेदोक्त ज्ञान के प्रकाश को प्रकाशमान करने में सहायक ज्योति पुंज-वैदिक संसार

अनुक्रमणिका

विषय	शब्द संग्रहकर्ता	पृष्ठ क्र.
वेद मन्त्र-भावार्थ एवं वैदिक संसार के उद्देश्य	वैदिक संसार	०४
महत्वपूर्ण पर्व-दिवस, जयन्तियां-पुण्यतिथियां	श्री मोहन कृति आर्ष पत्रकम्	०४
मेरे पिता- दादा दुलीचन्द जी शर्मा	सम्पादकीय	०५
हमारी महान विभूतियां - डा. शान्तिस्वरूप भटनागर	पं. शिवनारायण उपाध्याय	०६
बूझो ! जन-गन-मन राष्ट्रगान या जार्ज की स्तुति	डॉंगरलाल पुरुषार्थी	०७
मूल से जुड़ो	डॉ. गंगाशरण आर्य	०९
पिता की पाती : पुत्री के नाम	लखन राठौर	१०
जो अपने इतिहास को जानेगा-समझेगा, वह एक	पं. उम्मेदसिंह विशारद	११
महर्षि दयानन्द के भाष्यानुसार-ऋग्वेद ज्ञानागार के...	पं. सत्यपाल शर्मा	१३
सृष्टि निर्माण और शान्तिपाठ	नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'	१४
वेद सुधा	पं. सत्येन्द्र आर्य	१५
वेद और सृष्टि विज्ञान-आधुनिक विज्ञान वेत्ताओं...	पं. ओमप्रकाश आर्य	१७
यजुर्वेद एक सरल अध्ययन-वेद आविर्भाव	रमेशचन्द्र चौहान	१९
मन्त्र गीत - श्रुति दुहिता	पं. देवनारायण भारद्वाज	२३
नरेन्द्र मोदी जी अब जागो	पं. नन्दलाल निर्भय	२३
वेद महिमा	नन्दराम आर्य	२३
अथर्ववेदादिधिकरण	स्मृति शेष-शान्तिस्वरूप गुप्त	२४
छाछ-मट्टा तक्र	हरिश्चन्द्र आर्य	२७
जीवन संग्राम	आर्य मोहनलाल दशोरा	२७
पुस्तक समीक्षा - भागवत दर्पण	महात्मा देवमुनि	२७
अघमर्षण मन्त्रों की व्याख्या	स्वामी हरिश्चरानन्द सरस्वती	२८
वैदिक विज्ञान में पदार्थों का वैज्ञानिक वर्गीकरण	कृपालसिंह	३१
आर्ष बोध, भाग-८ एवं सैद्धान्तिक चर्चा	पं. कमलेश कुमार अग्निहोत्री	३२
वैदिक विवाह संक्षिप्त विवेचन	मंगलसिंह अनाकर	३७
ज्योतिष चर्चा: सत्यार्थ प्रकाश	आचार्य दार्शनिय लोकेश	३९
प्रेरणास्पद व्यक्तित्व : श्रद्धेश्री किशोरिलाल जी...	वैदिक संसार	४१

आर्यों का महाकुम्भ

वैदिक पाणिग्रहण संस्कार : सौ. कां. भाग्यश्री संग चि. अर्जुन

दिनांक : ५ जनवरी २०१९, शनिवार

स्थान : कान्हा मांगलिक भवन, शामगढ़, जनपद मन्दासौर (म.प्र.)

वैदिक धर्म-संस्कृति के प्रचार-प्रसार को समर्पित उपरोक्त आयोजन आचार्य विष्णुमित्र जी वेदार्थी, विजनौर तथा आर्य जगत् की सुप्रसिद्ध भजनोपदेशिका सुश्री अंजलि आर्या तथा अनेक वैदिक विद्वानों की गरिमामयी उपस्थिति में सम्पन्न होगा। समस्त स्नेहीजन इस सूचना को निमन्त्र पत्र का मान देकर पधारने की कृपा करें - सुखदेव शर्मा

वेद मन्त्र एवं भावार्थ

ओ३म् एवा ह्यस्य सूनृता विरणी गोमती मही। पक्का शाखा न दाशुषे ॥ ऋ. १.८.८

भावार्थ : जैसे विविध प्रकार से फलफूलों से युक्त आम और कटहल आदि वृक्ष नाना प्रकार के फलों के देने वाले होके सुख देनेहारे होते हैं, वैसे ही ईश्वर से प्रकाश की हुई वेदवाणी बहुत प्रकार की विधाओं को देनेहारी होकर सब मनुष्यों को परम आनन्द देने वाली है। जो विद्वान लोग इसको पढ़के धर्मात्मा होते हैं, वे ही वेदों का प्रकाश और पृथिवी में राज्य करने को समर्थ होते हैं।

श्री मोहन कृति आर्ष पत्रकम् अनुसार आर्यावर्त के माह जनवरी २०१८ के महत्वपूर्ण पर्व एवं दिवस

गते ११ तपस मास १९४० शक स. पौष कृष्ण एकादशी २०७५	१ जनवरी	सत्येन्द्रनाथ बोस जयन्ति, डॉ. शान्तिस्वरूप भटनागर पुण्यतिथि
गते १३ तपस मास १९४० शक स. पौष कृष्ण त्रयोदशी २०७५	३ जनवरी	सावित्रीबाई फूले जयन्ति
गते १५ तपस मास १९४० शक स. पौष कृष्ण अमावस्या २०७५	५ जनवरी	पूर्वाषाढ़ - २५:२८, परमहंस योगानन्द जयन्ति, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र पुण्यतिथि
गते १८ तपस मास १९४० शक स. माघ शुक्ल द्वितीया २०७५	८ जनवरी	पंचक प्रारम्भ - २१:५८
गते २१ तपस मास १९४० शक स. माघ शुक्ल पंचमी २०७५	११ जनवरी	लाल बहादुर शास्त्री पुण्यतिथि, वीर हकीकत राय पुण्यतिथि
गते २२ तपस मास १९४० शक स. माघ शुक्ल षष्ठी २०७५	१२ जनवरी	स्वामी विवेकानन्द व महर्षि महेश योगी जयन्ति, राष्ट्रीय युवा दिवस
गते २३ तपस मास १९४० शक स. माघ शुक्ल सप्तमी २०७५	१३ जनवरी	उत्तराभाद्रपद - २९:१७
गते २४ तपस मास १९४० शक स. माघ शुक्ल अष्टमी २०७५	१४ जनवरी	जयशंकर प्रसाद पुण्यतिथि
गते २५ तपस मास १९४० शक स. माघ शुक्ल नवमी २०७५	१५ जनवरी	पंचक समाप्त - ०७:५८, दादा धनीराम पुण्यतिथि, भारतीय थल सेना दिवस
गते २६ तपस मास १९४० शक स. माघ शुक्ल दशमी २०७५	१६ जनवरी	भरणी - ३०:५८, गुरु हरराय जयन्ति
गते २८ तपस मास १९४० शक स. माघ शुक्ल द्वादशी २०७५	१८ जनवरी	मृगशिरा - २९:५९
गते ३० तपस मास १९४० शक स. माघ शुक्ल चतुर्दशी २०७५	२० जनवरी	कुम्भ सक्रान्ति - १४:३०
गते ०१ तपस्य मास १९४० शक स. माघ शुक्ल पूर्णिमा २०७५	२१ जनवरी	क्षय तिथि प्रतिपदा - ३१:०७, सन्त रविदास जयन्ति
गते ०२ तपस्य मास १९४० शक स. माघ कृष्ण द्वितीया २०७५	२२ जनवरी	अमर बलिदानी ठाकुर रोशनसिंह जयन्ति
गते ०३ तपस्य मास १९४० शक स. माघ कृष्ण तृतीया २०७५	२३ जनवरी	मघा - २७:२६, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस जयन्ति
गते ०६ तपस्य मास १९४० शक स. माघ कृष्ण षष्ठी २०७५	२६ जनवरी	हस्त-२६:३९, चित्रा-२७:२०, गणतन्त्र दिवस, सीमा शुल्क दिवस
गते ०८ तपस्य मास १९४० शक स. माघ कृष्ण अष्टमी २०७५	२८ जनवरी	लाला लाजपत राय जयन्ति
गते १० तपस्य मास १९४० शक स. माघ कृष्ण दशमी २०७५	३० जनवरी	जयशंकर प्रसाद जयन्ति, महात्मा गान्धी पुण्य तिथि, शहीद दिवस

भारत
के एकमात्र
वैदिक
पंचांग से

नवीन पंचांग प्रकाशन
कार्य प्रगति पर है,
अपनी प्रति अतिशीघ्र
आरक्षित करवाएं।

अन्य स्रोतों से प्राप्त

जनवरी माह के कुछ विशेष दिवस

- ०१ ईस्वी (अंग्रेजी) नववर्ष प्रारंभ
- ०२ हैदराबाद सत्याग्रही स्वामी स्वतन्त्रतानन्द जयन्ति
- १० विश्व हिन्दी दिवस
- ११ स्वामी स्वतन्त्रतानन्द जयन्ति
- १३ गुरु गोविन्दसिंह जयन्ति
- १५ स्वामी समर्थानन्द पुण्यतिथि
- १६ प्रार्थना समाज के संस्थापक तथा आर्य समाज पूना के प्रथम प्रधान न्यायमूर्ति गोविन्द रानाडे पुण्यतिथि
- २१ मेघालय स्थापना दिवस, वीर हेमू कालानी बलिदान दिवस, पं. सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला जयन्ति
- २६ स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती जयन्ति
- ३० कुष्ठ रोग निवारण दिवस

किसी भी शंका समाधान एवं पंचांग प्राप्ति हेतु आ. दार्शनिक लोकेश, ग्रेटर नोएडा (उ.प्र.) से मो. ०९४९२३५४०३६ पर सम्पर्क करें।

वैदिक संसार के उद्देश्य

- जगत् नियन्ता परमपिता परमात्मा द्वारा मानव की उत्पत्ति के साथ सम्पूर्ण मानव जाति के कल्याणार्थ दिए गए ज्ञान-वेदों की महत्ता को पुनर्स्थापित करने हेतु वैदिक सिद्धान्तों, ऋषि-मुनियों एवं ऋषि दयानन्द प्रणीत सन्देशों को प्रकाशित करना।
- महान् योगी, संन्यासी, महर्षि, अखण्ड ब्रह्मचारी, वेद प्रतिष्ठापक, तत्त्वज्ञानी, युगदृष्ट, स्व राष्ट्रप्रेमी, स्वराज्य के प्रथम उद्घोषक, नवजागरण के सूत्रधार, शोषित-पीड़ित वर्ग एवं महिला उद्धारक, समाज सुधारक, खण्डन-मण्डन के प्रणेता, अन्धविश्वास नाशक, पाखण्ड खण्डनी ध्वजा वाहक, आर्य समाज संस्थापक, अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश एवं

वेदानुकूल सदसाहित्य के रचयिता, दयालु, दिव्य, अमर बलिदानी दयानन्द के सन्त मानव जाति पर किए गए उपकारार्थ कार्यों को गतिमान बनाए रखने हेतु प्रयत्न करना।

- आमजन में व्याप्त अज्ञानता, धर्मान्धता, अन्धविश्वास, पाखण्ड, कुरीतियों के विरुद्ध जन जागरण कर उन्मूलन हेतु प्रयास करना।
- आर्य (श्रेष्ठ) विद्वान् महानुभावों के मन्तव्यों, सन्देशों का प्रचार-प्रसार कर प्रतिजन को उपलब्ध करवाना।
- आवश्यक सूचनाओं, गतिविधियों, समाचारों को प्रतिजन तक पहुंचाने का प्रयास करना। ●

हृदय की गहराइयों से
पूज्य पिता की पावन स्मृति को सादर समर्पित

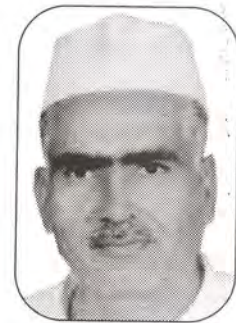
मेरे पिता - दादा दुलीचन्द जी शर्मा

चलते-चलते कभी न थके, ऐसे मेरे पिता के पांव
उनसे मिलकर यह लगे, जैसे बरगद की छांव
श्रम करते-करते कभी न थके, था ऐसा उनका तन
थाह कोई क्या पाएगा, सागर सा था गहरा उनका मन
बच्चों के सुख की खातिर, दिन देखें न देखी रात
लाने तैयार खड़े रहे सदा, हर सुख की सौगात
पूरा जीवन कर दिया अर्पण, बच्चों के पालन में
उनकी बातों में कितनी गहराई थी, आती याद तन्हाई में
पिता बनें तब समझ आया, पीड़ा क्या होती पिता की
ईश्वर को नहीं देखा, मैंने देखी सूरत तात् की
पिता नहीं है जिनके, पूछो उनके दिल का हाल
नयन भीग जाते हैं उनके, हो जाते हैं वे बेहाल
जब तक वे जीवित थे, थी नहीं चिन्ता किसी बात की
पढ़े-पढ़े हो आशीर्वाद तुम्हारा, इच्छा होती हर संतान की
कोई पिता शत्रु नहीं होता, वह अभागा है जो समझे शत्रु पिता को
खो दिये अनमोल वचन, अल्हड़ जवानी और नादानी में पिता के
संजो ले जो अपने पिता के अनुभवों की थाती और सीख को
जिसे दुनिया की ठोकर खा कर सीखना नहीं पड़े, वह भाग्यशाली है



स्मृति शेष

प. दुलीचन्द जी शर्मा



- सुखदेव शर्मा -

प्रकाशक : वैदिक संसार
इन्दौर (म.प्र.)



डा. शान्तिस्वरूप भटनागर

डा. शान्तिस्वरूप भटनागर का जन्म १९१४ में हुआ था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा लाहौर में हुई। उन्होंने अपनी शिक्षा पी. सी. राय के शिष्य A.C. Ghosh के निर्देशन में की। इस प्रकार वह पी.सी. राय के शिष्य के शिष्य थे। वे अपने को पी.सी. का Grand pupil कहते थे। पंजाब विश्व विद्यालय के फोरमेन

क्रिश्चियन कॉलेज से उन्होंने रसायन शास्त्र में M.Sc. की उपाधि प्राप्त की। फिर सन् १९१९ में वे इंग्लैण्ड चले गए और लन्दन विश्व विद्यालय के कॉलेज में प्रोफेसर एफ. जी. डोनन के नीचे कार्य करने लग गए।

सन् १९२१ में उन्होंने Emulsions विषय पर D.Sc. की पदवी (उपाधि) प्राप्त की। फिर वे भारत लौट आए और बनारस हिन्दू विश्व विद्यालय में रसायन शास्त्र के प्रोफेसर के पद पर नियुक्त हो गए। इससे पूर्व उन्होंने कुछ समय तक कैसर बिल्हेलम संस्था बर्लिन में भी काम किया था। फिर सन् १९२४ में डा. भटनागर को पंजाब विश्वविद्यालय में विश्वविद्यालय प्रोफेसर फिजिकल केमिस्ट्री एवं निदेशक विश्वविद्यालय रसायन शास्त्र प्रयोग शालाएं लाहौर हेतु आमंत्रित किया जिसे उन्होंने स्वीकार किया। वे यहां पर १६ वर्ष तक रहे। यह काल वहां तीव्र शोध कार्य माना गया कोलाइड्स, सरफेस, केमिस्ट्री, फोटो केमिस्ट्री के क्षेत्र में डा. भटनागर तथा उनके शिष्यों ने बड़ा काम किया।

सन् १९२६ में ही डा. भटनागर और उनके शिष्यों ने मेग्नेटो-केमिस्ट्री के क्षेत्र में कार्य प्रारम्भ किया। इस क्षेत्र के वे नेता माने गए। वास्तव में डा. भटनागर ने इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया है। जब सन् १९३९ में द्वितीय विश्व युद्ध प्रारम्भ हुआ तब भारत सरकार को डा. भटनागर की वैज्ञानिक और औद्योगिक क्षेत्र में शोध के लिए निदेशक के पद पर सेवा की आवश्यकता हुई। उन्होंने आमंत्रण स्वीकार किया और सरकार की अपेक्षाओं को पूर्ण किया। यद्यपि उन्हें प्रशासनिक एवं सलाहकार के भारी कर्तव्यों के भार के साथ काम करना पड़ा। फिर भी डा. भटनागर ने शोध कार्य में रुचि ली और उनके स्वयं के तथा उनके स्टाफ के द्वारा शोध के साथ कई और महत्वपूर्ण समस्याओं का निराकरण किया।

उन्होंने Anti Gas Cloth और वारनिश एयर फोम सोलूशन, वेजीटेबल ऑयल, ब्लेण्ड्स इंधन, नहीं फूटने वाले कन्टेनर, ग्लास सबस्टीट्यूट्स आदि भारतीय व्यर्थ सामग्री (कचरा) से बनाए। डा. भटनागर को कई पारितोषिक भी प्राप्त हुए। सन् १९३६ में भारत सरकार ने उन्हें O.B.E. की पदवी दी। सन् १९४१ में उन्हें Sir की उपाधि से सम्मानित किया गया। सन् १९४३ ई. में लन्दन की केमिकल सोसायटी ने उन्हें अपना

शिवनारायण उपाध्याय

७३, शास्त्री नगर दादाबाड़ी, कोटा (राज.)

चलभाष - ०७४४२५०१७८५



सम्मानित सदस्य चुना और फिर उपाध्यक्ष के पद पर भी चुने गए। उसी वर्ष उन्हें रायल सोसायटी का सदस्य भी चुना गया। उनको आक्सफोर्ड, पटना, इलाहाबाद, दिल्ली, बनारस, लखनऊ, आगरा और सागर विश्वविद्यालय ने आदर के रूप में आनरेरी डाक्टर ऑफ साइन्स की उपाधि से सम्मानित किया। फिर १९४५ में वे भारतीय वैज्ञानिक कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए। सन् १९४७-४८ में वे राष्ट्रीय वैज्ञानिक संस्थान के अध्यक्ष रहे। उन्हें सन् १९५४ में पद्म विभूषण से विभूषित किया गया।

डा. भटनागर को उर्दू कविताओं को पढ़ने का बड़ा शौक था। वे स्वयं भी कवि थे। वे रुखे सूखे श्लोकों में कविता नहीं करते थे। वे एक जन्म जात प्रशासक थे और अपने अधीन प्रत्येक कार्यक्रम के सम्पर्क में रहते थे। उनकी विशेषता थी शीघ्र निर्णय लेना और अपने उच्च अफसरों के प्रति पूर्ण विश्वास रखना। इसलिए वे उनको दिये गये प्रत्येक कार्य को सफलता के साथ पूर्ण करने में सफल रहे। उनके कार्य को शीघ्र पूर्ण कर लेने की योग्यता और अदम्य शक्ति के कारण उन्हें Livewire (जीविततार) के नाम से पुकारा गया है।

उनके शानदार करियर का राज था हर किसी के पास सरलता से पहुंच जाना। डा. भटनागर C.S.I.R. और U.G.C. के निर्माता थे। वे C.S.I.R. के संस्थापक निदेशक थे U.G.C. के अध्यक्ष के रूप में उन्होंने प्रशंसनीय योग्यता के साथ काम किया।

द्वितीय विश्व युद्ध के समय उन्होंने केन्द्रीय सरकार के अन्तर्गत एक व्यवस्थित शोध संस्थान को स्थापित किया। जब सन् १९४७ में भारत स्वाधीन हो गया तब डा. भटनागर देशभर में बहुसंख्या में प्रयोगशालाएं स्थापित करने में मुख्य साधक बने। उनमें से कुछ हैं- नेशनल फिजिकल लेबोरेटरी, नई दिल्ली, सेन्ट्रल फ्यूएल रिसर्च इन्स्टीट्यूट धनबाद, द एन.एम.एल. जमशेदपुर, नेशनल केमिकल लेबोरेटरी पुना, द सी.एफ.टी.आर.आई. मैसूर, C.D.R.I. लखनऊ, दी सी.एस.आई.आर. नई दिल्ली आदि। ये सब राष्ट्रीय प्रयोग शालाएं C.S.I.R. के अधीन स्थापित की गईं।

C.S.I.R. ही आणविक शक्ति का शान्तिपूर्ण उपयोग में शोध कार्य की योजक संस्था है। इस दिशा में उनकी योजना के फलस्वरूप आणविक ऊर्जा कमीशन का गठन हुआ। यह कार्य दूसरे शक्तिमान डा. एच.जे. भाभा के अधीन रहा। डा. शान्तिस्वरूप भटनागर प्राकृतिक स्रोत और वैज्ञानिक शोध विभाग के मंत्रालय में सचिव के रूप में भी रहे। १ जनवरी १९५५ को नई दिल्ली में उन्होंने अन्तिम श्वास ली। इति। ●

क्रान्ति का बीज मन्त्र वन्दे मातरम् को तुष्टिकरण के चलते उपेक्षित कर जार्ज पंचम की स्तुति को राष्ट्रगान के रूप में अपनाया गया - सम्पादक

बूझो ! जन-गण-मन राष्ट्रगान या जार्ज की स्तुति

संसार में कविता अनेकों क्रांतियां कर चुकी।

मुरझे मनो में वेग की विद्यु-प्रभाएं भर चुकी॥

हे अन्ध-सा अन्तर्जगत कवि-रूप सविता के बिना।

आजादी जीवित रह नहीं सकती सु-कविता के बिना॥ (गुप्त जी)

- डॉ. रमलाल पुरुषार्थी -

प्रधान-आर्य समाज, कसरावद

जिला- खरगोन (म.प्र.)

चलभाष : ८९५९० ५९०९९



स्तुति हो उनकी जो स्वदेश के मान का व्रत लेते हैं।

स्तुति हो उनकी जो वतन की शान में तन देते हैं।

आजाद आवाम के नाम, राष्ट्रीयता का यह पैगाम।

राष्ट्रगान में हैं, अधिनायक जॉर्ज का गुण-गान॥

माया शब्द से अर्थ- धन, जादू, भ्रम, अज्ञान। संधि-विग्रह-मा + या। मा = नहीं, या = जो। अर्थात् जो नहीं है वह माया। जैसे-पानी पर कोई आच्छादित हो जाने पर पानी का आभास नहीं होता है। सूर्य की तपन से रेगिस्तान में दूर तलक जल ही जल दिखाई देता है। सनातन काल से मनाया जाने वाला विजयदशमी पर्व को रावण-वध के रूप में मनाना अज्ञानता का भाव है। द्वापर में चित्रकार की चित्रकारी में दुर्योधन को जहां जल था वहां थल के मिथ्याभास के कारण अन्धत्व-वाणी की प्राप्ति हुई। हमारे राष्ट्र का नाम-आर्यावर्त और भारत हमारी आन, बान, शान है। हिन्दुस्तान और इण्डिया नाम मुगलों और अंग्रेजों द्वारा दिया जाना, काफिर, गुलामों को शाबासी, सम्मान, शान में नहीं नामकरण हुआ। बंगाली-साहित्य सम्राट बंकिम बाबू द्वारा विरचित आनन्द मठ में "वन्दे मातरम्" मातृभूमि की वन्दना है। कोई सामुदायिकता नहीं, क्योंकि- "मिट्टी की महिमा मिट्टी में है। मिट्टी मिट-मीट कर संवरती है। मिट्टी, मिट्टी पर मिटती है। मिट्टी, मिट्टी को रचती है॥ मिट्टी में सभी को समाहित होना पड़ता। मिट्टी की वन्दना में कैसी सांप्रदायिकता हो सकती है ? जबकि रविन्द्र बाबू के- "जन-गण-मन अधिनायक जय हे।" में अंग्रेज शासक जार्ज पंचम की स्तुति गान है। रविन्द्र बाबू की कहानियां, उपन्यास, कविता-भण्डार में कहीं उल्लेख नहीं है। अंततः सूक्ति - "सच्ची बात अच्छी नहीं लगती है तथा अच्छी बात प्रायः सच्ची नहीं होती है," चरितार्थ हो जाती है।

सन् १९११ में अंग्रेज शासक जार्ज पंचम के भारत आगमन के पहले बम्बई बन्दरगाह पर "गेटवे ऑफ इण्डिया" बनाया गया ताकि जार्ज का जहाज वहां रुक सके। तत्पश्चात् अंग्रेजों की राजधानी कलकत्ता सहित सारे बंगाल में और बंगाल के बाहर सम्पूर्ण भारत में "वन्दे मातरम्" गीत का स्वर गूँजने पर इंग्लैण्ड से आदेश आया कि, राजधानी को कलकत्ता से दिल्ली लाया जावे। इस प्रकार ब्रिटिश सरकार द्वारा दिनांक २७-१२-१९११ को दिल्ली को राजधानी बनाया जाना तय हुआ। सम्पूर्ण भारत के राजा, नवाबों, जमींदारों, गणमान्य लोगों को निमंत्रण वितरित कर दिये गये। इस दिनांक को जार्ज पंचम का भव्य स्वागत किया जावेगा और इनकी शान में कवि रविन्द्र द्वारा "स्तुति गान" की प्रस्तुति की जावेगी। नियत तारीख को सारा दिल्ली दरबार खचाखच भर गया। ठीक समय पर जार्ज पंचम अपने भव्य सिंहासन पर विराजमान हो गये। जार्ज के दाहिनी ओर मेवाड़ के महाराणा फतेह सिंह की पहली कुर्सी लगी थी, इसके बाद क्रम से जयपुर, जोधपुर आदि हिन्दू राजाओं की कुर्सियां लगी थी। बाईं ओर पहली कुर्सी निजाम हैदराबाद के बाद क्रमशः जूनागढ़, भोपाल, संभात, कुलात, खैरपुर, बहावलपुर आदि मुस्लिमों नवाबों कुर्सियां लगी थी। इस प्रकार भारत के राजा-महाराजा, नवाब, सेठ-जमींदारों आदि से दरबार भर गया। रविन्द्र बाबू जॉर्ज पंचम की शान में स्तुति करने हेतु खड़े थे, तो जार्ज की नजर अपनी दाहिनी ओर की कुर्सी पर पड़ी। जिस पर लिखा था मेवाड़। संचालक से जार्ज ने पूछा, तो जवाब पाया कि मेवाड़ के राजा फतेहसिंह दरबार में नहीं आवेंगे। कुर्सी को खाली देख दरबार में फुसफुसाहट के भाव प्रकट हो रहे थे। रविन्द्र बाबू जार्ज की शान में जो स्तुति लिखकर लाये थे उसमें

मेवाड़ (राजस्थान) पर भी लिखा गया था। महाराणा के नहीं आने पर रविन्द्र बाबू स्तुति की कविता की पंक्तियां बदल रहे थे। जो कि पूरब से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण तक का भारत कविता में समाहित था। सारा भारत जार्ज को मस्तक झुकाने आया था। किन्तु प्रताप का मेवाड़ सिर झुकाने नहीं आया था। चित्तौड़ और अरावली पर्वत का महाराणा नहीं आया था। संचालक का संकेत मिलते ही कवि रविन्द्र के स्तुति-स्वर फूट निकले जन-गण-मन अधिनायक जय हे। भारत भाग्य विधाता। अर्थात् हे शासक! भारत की आम और खास जनता सभी मन से तानाशाही (अधिनायक) जॉर्ज पंचम हम सब आप की जय-जयकार करते हैं। आप ही भारत के राजराजेश्वर हैं और हमारे भाग्य के विधाता हैं। "पंजाब, सिन्ध, गुजरात, मराठा में सिन्ध के बाद तथा गुजरात से पहले राजा-महाराणाओं का राजस्थान कैसे छूट गया? द्रविड़, उत्कल, बंग, विन्ध्य, हिमाचल के साथ शूर वीरों का अरावली पर्वत कैसे छूट गया? यमुना, गंगा, उच्छल, जलधि तरंग" में राजस्थान में बहती विश्व की एकमात्र खारे पानी की लूणी नदी कैसे छूट गयी? तब शुभ नामे जागे तब शुभ आशिष माँगे, गाहे तब जय गाथा। सारे भारत में बात फैल गयी कि प्रताप का वंशज आशीष मांगने नहीं आया।

आखिर! क्या कारण था, कि महाराणा फतेहसिंह क्यों नहीं गये? महाराणा अपने लाव-लशकर, अंग-रक्षकों के साथ स्पेशल रेल से दिल्ली चल दिए थे जब रेल बूंदी स्टेशन पर रुकी, तो केशरीसिंह जो बूंदी के राजकवि थे। खम्मा-घणी अर्ज करने स्टेशन आये और एक कागज महाराणा को देकर शीघ्र उतर गये। राणा ने देखा कि राज कवि की आंखों से आंसू झड़ रहे थे और दुपट्टे

से आंसू पोंछ रहे थे। कागज को खोलकर पढ़ना शुरू किया। कवि ने अपना हृदय निकाल कर कागज में लिखा था-महाराणा सा! आज तक आपका कोई भी पुरखा दिल्ली दरबार में मस्तक झुकाने नहीं गया। आपको क्या हो गया है? मेवाड़ की आन, महाराणाओं की बान तथा सारे हिन्दु-समाज की शान आपके हाथों में है। तुम दिल्ली मत जाओ, वापिस उदयपुर लौट जाओ राणा सा। कागज पढ़ते-पढ़ते महाराणा के दाँत भिच गये, मुख पर तेज निखरा और गर्जते हुए आज्ञा दी, कि रेल का इंजन पीछे लगाओ हम उदयपुर लौट रहे हैं। उक्त घटना के पहले एक बार अकबर ने राजकवि से कहा मेरी शान में कोई कविता पढ़ो। राज कवि ने कहा-

**“अकबर समद अथाह, जिन डूबा हिन्दू तुरक।
मेवाड़तिन माह, पोयण फूल प्रताप-सी।।**

अकबर तुम अथाह सागर हों, जिसमें हिन्दू और तुर्क डूबे हैं। ऐसे सागर में एक ऐसा पुष्प है जिसका नाम प्रताप है। वह कमल की भाँति पानी में कभी नहीं डूबा। अकबर ने अन्य कवि से कहा- तुम मेरी शान में कविता पढ़ो - कवि ने कहा-

अकबर जासी आप, दिल्ली पासी दूसरा।

पुण रासी प्रताप, जस नाहिं जासी सूरमा।।

अकबर एक दिन तू चला जायेगा, दिल्ली किसी और को मिलेगी। किन्तु पुण्यात्मा प्रताप जैसा शूरमा का यश कभी नहीं जायेगा।

इस प्रकार ४०० वर्ष बाद दिल्ली दरबार में प्रताप का, मेवाड़ का कमल पुनः खिला जो ३६ वर्ष बाद सन् १९४७ को भारत आजाद हुआ। किन्तु अफसोस! रविन्द्रबाबू द्वारा जार्ज की शान में स्तुति गान को राष्ट्रगान के रूप में स्वीकार करना हमारी गुलाम मानसिकता का द्योतक है। जबकि पाकिस्तान में यह गाना नहीं गाया जाता है उनके लिए गर्व की बात है, तो हमारे लिए शर्म की। जब दिल्ली में जॉर्ज पंचम की शान में दिसम्बर १९११ में स्तुति गान के रूप में गाने के बाद सन् १९१२ में “भारत भाग्य विधाता” नामक शीर्षक से तत्वबोधिनी में यह रचना प्रकाशित हुई जिसके कारण रविन्द्रबाबू की पहचान अंग्रेजों की कृपा दृष्टि से विश्व-कवि के रूप में हो गयी। सन् १९१३ में

गीतांजलि काव्य, साहित्य के क्षेत्र में नोबेल पुरस्कार तथा सन् १९१५ में ब्रिटिश सरकार द्वारा “सर” की उपाधि से सुशोभित हो गये। अंग्रेजी शासन के पूर्व मुगल-काल में रविन्द्र बाबू के दादाजी को “ठाकुर” उपाधि से अलंकृत किया गया था। जो सन् १८८३ में मुर्शिदाबाद के नवाब द्वारा दादाजी को मुसलमान बनाया गया था। जबकि बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय का उपन्यास “आनन्दमठ” में निहित “वन्दे मातरम्” क्रान्ति के क्षेत्र में क्रान्तिकारियों का अस्त्र और क्रान्ति का बीज-मंत्र सिद्ध हुआ। आनन्दमठ उपन्यास की लोकप्रियता और बिक्री के मामले में एक अनुपम मिसाल साबित हुई। अंग्रेज सरकार ने इस उपन्यास के विक्रय पर प्रतिबन्ध लगाते हुए प्रतियों को जप्त कर ली गयी। “स्वराज मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है” नारे का उद्घोष करने वाले लोकमान्य तिलक ने जन-जागृति हेतु शिवाजी उत्सव, गणेशोत्सव का श्रीगणेश करने पर अंग्रेज सरकार ने सन् १८९७ में तिलक जी पर राजद्रोह भड़काने के मामले में गिरफ्तार करके जेल में डालने के बाद कठोर यातनाओं का उपहार ब्रिटिश सरकार द्वारा दिया गया। “तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूंगा” नारे का शंखनाद करने वाले नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने क्रान्ति के क्षेत्र में पहली बार बंगाल में क्रान्तिकारियों को संगठित करके “प्रिन्स ऑफ वेल्स” के आगमन पर उनके स्वागत का बहिष्कार किया तो “आज्ञा भंग” के आरोप में हजारों क्रान्तिकारियों को गिरफ्तार करके जेल में डाल दिया गया तथा सुभाष बाबू को बंदी बनाकर अलीपुर जेल यातनायें भरी छः महीने की सजा का पुरस्कार प्राप्त हुआ। “जो भरा नहीं भावों से, बहती जिसमे रसधार नहीं। वो हृदय नहीं पत्थर है, जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।।” ऐसी राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत स्वदेशी बिगुल बजाने वाले राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त द्वारा रचित महाकाव्य “भारत भारती” ने सन् १९२१ से १९४० तक जन-मानस पर ऐसा प्रभाव डाला कि ब्रिटिश सरकार ने गुप्त जी को बंदी बनाकर झांसी की जेल में डालने के पश्चात् आगरा जेल की अन्धेरी कोठरी में दूंस दिया। “भारत भारती” काव्य की होली जलवा दी। सरकार ने गुप्त जी को सात माह

की सजा में अकल्पित यातनाओं का पारितोषिक दिया गया। इस प्रकार अनेक देशभक्त, स्वाभिमानी, आजादी के दीवाने क्रान्तिकारियों को न्यायालयों में झूठे गवाहों को उपस्थिति कर अन्याय और तानाशाही का खौफ प्रस्तुत कर लाखों बेगुनाहों को फांसी पर लटकाया जाना, काले पानी की सजा सरकार के लिये आम बात हो गयी थी। जिस प्रकार पेड़ की लकड़ी ही कुल्हाड़ी में लगने के कारण पेड़ कट कर नष्ट होते हैं। ठीक ऐसे ही भारतीय नौकरशाह, गद्दारों के कारण अंग्रेजों के जुल्म बढ़ते ही गये। भारतीय जनता गाजर-मूली की भाँति मौत की शिकार होती रहीं। तानाशाह कर्जन वाइली की उसी के गृह-नगर लन्दन में शेर-ए-दिल मदनलाल धींगरा ने वाइली पर गोलियां बरसाते हुए चेहरा विकृत कर मौत के घाट उतारने पर विश्व के सकारात्मक सोच के महानुभावों ने धींगरा के कार्य की बहुत प्रशंसा की गयी। धींगरा के कदम को उचित बताया गया। जबकि मदन मोहन मालवीय ने हिंसक कार्य बताते हुए अंग्रेजों के समक्ष अनुचित बताया। दिनांक १३-०४-१९१९ को जलियांवाला बाग शर्मनाक हत्याकाण्ड क्या हिंसक नहीं था? भारत के अनेक अंग्रेजों के चापलूसों द्वारा अहिंसा का राग अलापने के कारण क्रान्तिकारियों के हाथों से आजादी फिसलती रही। दिनांक २१-३-२०१४ के नई दुनिया दैनिक समाचार पत्र में साहित्यकार, लेखक, समीक्षक खुशवन्त सिंह के निधन पर प्रकाशित समाचारों में साहित्य में नोबेल पुरस्कार प्राप्त रविन्द्रबाबू पर लिखते हैं कि “रविन्द्रबाबू जितने अच्छे उपन्यासकार, कहानीकार, लेखक थे, कवि कदापि नहीं।” अर्थात् जॉर्ज पंचम की शान में स्तुति कभी धर्म नहीं था।

गुप्त जी के अनुसार -

जिनको न निज गौरव,

न निज देश का अभिमान है।

वह नर नहीं पशु है निरा,

और मृतक समान है।।

निज गौरव का नित ज्ञान रहे,

हम भी कुछ हैं यह ध्यान रहे।

सब जाय अभी पर मान रहे,

मरणोत्तर गुंजित गान रहे।। (जय भारती) ●

मूल से जुड़ो-जो मूल से छूटा वह धूल हो गया

- डॉ. गंगाशरण आर्य -

चरित्र निर्माण मंडल, सैनी मोहल्ला,
ग्राम-शाहबाद मोहम्मद पुर, नई दिल्ली
चलभाष : ९८७१६४४१९५



वेद में सिद्धान्त है। वेद ईश्वर की थ्योरी है सृष्टि उसका प्रैक्टिकल है इसलिए थ्योरी गलत पढ़ाई जाएगी तो प्रैक्टिकल तो गलत होगा ही। कुरान की थ्योरी गलत है इसलिए प्रैक्टिकल देख लो, अतः मूल से जुड़ना चाहिए? क्यों जुड़ना चाहिए। उदाहरण से समझिए :-

जब तक फल मूल वृक्ष से जुड़ा रहता है। तो परिपुष्ट रहता है, सड़ता नहीं है और जब मूल से हटा दिया जाए तो एक निश्चित समय के बाद सड़ना शुरू हो जाता, विकार युक्त हो जाता है, कीड़े पड़ जाते हैं और अधिक देर तक उसे सुरक्षित रखने के लिए रासायनिक साधनों को जुटाना पड़ता है। वह सड़ा हुआ फल तो कभी भी आरोग्य प्रदान नहीं कर सकता। उसी प्रकार मनुष्य जब मूल परमपिता परमात्मा से दूर हो जाता है तो उसके जीवन में विकार उत्पन्न होकर दुर्व्यसन रूपी कीड़े उसके शरीर को अपना घर बना लेते हैं और उसका जीवन दुर्गन्धयुक्त हो जाता है और जिस प्रकार सड़ा हुआ फल भोक्ता (खाने वाले) को आरोग्य अर्थात् स्वास्थ्य प्रदान नहीं कर सकता उसी प्रकार परमपिता परमात्मा से दूर होने के बाद दुर्व्यसन व पापाचार से युक्त व्यक्ति समाज को सही दिशा प्रदान न करके घोर पतनकारी पथ का अनुगामी बना देगा इसलिए मूल से जुड़ो क्योंकि मूल से जुड़ने पर ही व्यक्ति अपने लक्ष्य तक पहुँच सकता है। इसी प्रकार मूल चेतन परमपिता परमात्मा के विषय में ठीक-ठीक ज्ञान न होने के कारण उसके सही स्वरूप से अनभिज्ञ रहने के कारण व्यक्ति उसे एकदेशी मान लेता है जिससे समाज में आपराधिक प्रवृत्तियाँ बढ़ जाती हैं और व्यक्ति स्वच्छन्द होकर अधर्मयुक्त कार्यों में लिप्त हो जाता है लेकिन यदि परमात्मा के सही स्वरूप का चिंतन हर मनुष्य कर ले कि ईश्वर सर्वव्यापक और न्यायकारी है तो मन्दिर में स्थानबद्ध करके बिठाए गए भगवान को वहीं तक सीमित न समझकर कोई भी गलत कार्य करना तो दूर, करने का विचार भी उसके मन में नहीं आएगा क्योंकि हर पल, हर क्षण उसे इस बात का आभास रहेगा कि मैं ईश्वर के सीसीटीवी कैमरे की कड़ी निगरानी में हूँ जो ईश्वर के सर्वव्यापक होने से सब जगह लगा हुआ है और ये न तो कभी खराब होता है और न ही बन्द होता है और न्यायकारी होने से ईश्वर की दण्ड व्यवस्था भी कड़ी है जो जन्म-जन्मान्तरों से चली जा रही है पुनर्जन्म की मान्यता को भी ठीक-ठीक समझ ले तो गलत काम के लिए हमारे जीवन में स्थान ही नहीं होगा। हमें मूल ईश्वर से क्यों जुड़ना चाहिए? आईए! एक उदाहरण से समझने का प्रयास करते हैं :-

एक बार विद्यालय में एक अध्यापक विद्यार्थियों को गणित पढ़ा रहे थे पढ़ाते समय उन्होंने ब्लैक बोर्ड पर एक का अंक (१) लिखा और बच्चों से पूछा कि कितनी संख्या लिखी है तो बच्चों ने जबाब दिया एक, मास्टर जी ने एक के आगे जीरो लगा दिया और फिर पूछा तो बच्चों ने कहा कि दस बन गया इसी प्रकार फिर से मास्टर जी ने एक जीरो और लगाकर फिर पूछा कि कितनी संख्या हो गई तो बच्चों ने कहा कि सौ, अब एक जीरो और लगा दी तो संख्या

बन गई हजार, इसी प्रकार मास्टर जी जीरो लगाते गए और संख्या बढ़कर अरब, खरब आदि हो गई इतने में एक बच्चा कक्षा में से खड़ा हुआ उसने डस्टर उठाया और एक मिटा दिया अब क्या हुआ वो अरबों, खरबों की संख्या एक के मिटाते ही एक पल में जीरो हो गई। कहने का तात्पर्य है कि एक से जुड़े बिना संसार में हमारी कीमत भी जीरो है। जब-जब हम उस ईश्वर की कृतियों का सहारा लेते हैं तो संसार में भौतिक उन्नति तो करते हैं लेकिन सबके मूल ईश्वर से दूर होकर अपने जीवन के मूल उद्देश्य से दूर होकर अज्ञान-अविद्या में फँसकर अध्यात्मिक अवनति की ओर अग्रसर हो जीरो ही हो जाते हैं और अपनी कृतियों के गुमान में खो जाते हैं जिससे ईश्वर की सत्ता के प्रति हमारा विश्वास भी डगमगा जाता है इसलिए मूल से जुड़ना। मूल से जब तक जुड़े रहेंगे तब तक ईश्वर के प्रति हमारा विश्वास भी अटूट रहेगा। मूल से जुड़ने का अर्थ है ईश्वरीय सत्ता के प्रति अटूट विश्वास होना। हमारा ईश्वर के प्रति विश्वास किस प्रकार से अटूट होना चाहिए। आईए! एक उदाहरण से इसे समझने का प्रयास करें :-

एक बार एक हवाई जहाज में १० सवारी बैठी हुई थी। उन १० सवारियों में एक बच्ची ११ वर्ष की थी बाकी सभी ९ व्यक्ति बड़ी-बड़ी आयु के थे। हवाई जहाज ने जैसे ही उड़ान भरी तो करीब १० मिनट के बाद मौसम खराब होने के कारण हवाई जहाज में तकनीकी खराबी आ गई और हवाई जहाज का संतुलन डगमगाने लगा, बिगड़ने लगा। हवाई जहाज में बैठी ११ वर्ष की बच्ची ऐसी स्थिति में उछलकूद मचाकर हर्ष और उल्लास में मग्न थी और बच्ची के अलावा सवार ९ व्यक्ति हाय मरे-हाय मरे, बचाओ हमें, बचाओ हमें, घबराने लगे। कुछ समय के बाद हवाई जहाज ठीक गति से चलने लगा। तब उन व्यक्तियों ने ११ वर्ष की उस बच्ची से पूछा बेटी हवाई जहाज की स्थिति में आपको जरा भी डर नहीं लगा तनिक भी घबराहट नहीं हुई तो उस बच्ची ने बड़ा सुन्दर जवाब दिया कि इस हवाई जहाज को चला रहे कैप्टन मेरे पिताजी हैं जो हवाई जहाज चलाने में बहुत ही एक्सपर्ट हैं तो मुझे किस बात का डर? कहने का तात्पर्य है कि जीवन रूपी हवाई जहाज को चलाने वाला वह सर्वव्यापक परमपिता परमात्मा है तो फिर जीवन रूपी हवाई जहाज में कैसी भी खराबी आ जाए तो हाय तोबा मचाने की जरूरत ही नहीं है।

आईए! अब देखते हैं कि ईश्वर की कृतियों से जुड़कर किस प्रकार मनुष्य ईश्वर से दूर होता जाता है। कहने का तात्पर्य है कि उसकी कृति का अंश लेकर जब मनुष्य अपने हाथ की कारीगरी दिखाता है तो वह कृति ईश्वर की नहीं मनुष्य की हो जाती है और अहंकारवश ... शेष भाग पृष्ठ ३० पर

पिता की पाती पुत्री के नाम



प्यारी पुत्री परिधि, शुभाशीष

तुम्हारा पत्र ३० अगस्त को मिल गया था, जवाबी पत्र में देर लग गई। पत्र में सोम के लिए भेजी गई राखी सोम तक पहुंचा दी है। मोबाइल युग में पत्रों का चलन बंद जैसा हो गया है। तुमने तो पहली बार पत्र लिखा है। पत्र की भाषा अच्छी है। राइटिंग भी सुधर गई है।

यहां हम यथावत हैं। रामनौमी जीजी का सीहोर गर्ल्स कॉलेज में प्रथम वर्ष (बीकॉम मैथ.) में प्रवेश हो गया है वहीं गर्ल्स हॉस्टल में कमरा भी मिल गया है।

तुमने अपने देवप्रयाग गुरुकुल की सौंदर्यता हमें दिखाने की इच्छा व्यक्त की है। मैंने यू-ट्यूब पर तो सब देख लिया है। समय मिलने पर माताजी सहित प्रत्यक्ष अवश्य देखेंगे। देवप्रयाग भारत का प्रसिद्ध तीर्थ है जो हिमालय की घाटियों में है। यहीं पर भागीरथी तथा अलकनंदा नदियों का संगम है, संगम के बाद ही इन नदियों का नाम गंगा जी हुआ है।

जिस गुरुकुल में तुम्हें पढ़ने का अवसर मिला है वह साधारण नहीं है, आर्य समाज की विचारधारा का और वह भी स्वामी रामदेव जी का यानी कि सोने पर सुहागा। अभी तुम पांचवी में हो, छोटी हो, किंतु आर्य समाज का ज्ञान तुम्हें घर से मिला है, बाकी वहां मिल जायगा।

आर्य समाज की स्थापना महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने १८७५ में मुम्बई में की थी, महर्षि दयानन्द जी सरस्वती तथा आर्य समाज के मानव जाति पर अनन्य उपकार हैं। आर्य समाज की गौरवशाली परम्परा है। इतिहास में इसे पढ़ाया जाता है। नेताओं, समाज सुधारकों, बुद्धिजीवियों, इतिहासकारों, साहित्यकारों ने यह स्वीकारा है कि आर्य समाजों ने देश, राष्ट्र, धर्म व समाज के लिए बड़ी-बड़ी कुर्बानी दी है। आज भी यह परम्परा जारी है। तुम व हम सब भी इस परम्परा-को आगे बढ़ाएंगे।

आर्य समाज ने धरती माता की सेवा के लिए अनेक श्रेष्ठ महापुरुषों को तैयार किया है, पंजाब केसरी लाल लाला लाजपत राय, स्वामी श्रद्धानन्द, लाला हरदयाल, भगत सिंह, श्याम जी, कृष्ण वर्मा, राम प्रसाद बिस्मिल, भाई परमानन्द, चौधरी चरण सिंह, अटल जी तथा इसी क्रम में आज हमारे बीच पूजनीय स्वामी रामदेवजी आचार्य बालकृष्ण जी हैं। उनसे जुड़ने का हमारे मन में गौरव का भाव होना चाहिए।

आजादी के आंदोलन में जेल जाने वाले ८५ प्रतिशत आर्यसमाजी ही थे, यह इतिहास में दर्ज है। हैदराबाद के शक्तिशाली निजाम की रियासत को भारत संघ में मिलाने में सरदार वल्लभ भाई पटेल को साथ देने वाले आर्य समाजी ही थे, नहीं तो एक पाकिस्तान बीच भारत में बन रहा था। आर्य समाज

के कार्यों को पत्र में बताना, पत्र को पुस्तक बनाने के समान है।

आज गली-गली में इंग्लिश मीडियम स्कूल खुल रहे हैं। यह स्कूल मैकाले की शिक्षा नीति के स्कूल हैं। यहाँ बच्चे केवल देखने में भारतीय हैं मन से पूरे अंग्रेज बन चुके हैं। यहां के बच्चे व टीचर महान भारत देश के बारे में कुछ नहीं जानते। संस्कृत, संस्कृति, संस्कार, त्याग, तपस्या, सेवा, देशभक्ति, धर्म, समाजसेवा के भाव तुम्हें गुरुकुल से ही मिलेंगे।

कुछ और भी कहना है: चरित्र सबसे बड़ा धन है, पूंजी है, सम्पत्ति है। चरित्र से हम अभय होकर रहते हैं। कोई धनवानों, कुलवानों यहां तक बड़े-बड़े साधु संतों, महंतों का चरित्र से गिरते देखा है। यह मीडिया वाले इन्हें आज दिखा रहे हैं। स्वामी दयानंद ने इनकी पोले १८७५ में ही अपनी प्रसिद्ध पुस्तक “सत्यार्थ प्रकाश” में खोल चुके हैं। अपने चरित्र का स्वयं अध्ययन करते रहना चाहिए मैं कहता था ना कि, “हमें हमसे अधिक कोई नहीं जानता है” हमारा सबसे बड़ा दुश्मन है, जो हमें आगे बढ़ने से रोकता है, वह है- आलस्य, प्रमाद, चमत्कार और भाग्य भरोसे कुछ नहीं मिलता। हमें डटकर मेहनत करनी चाहिए। अभ्यास से कठिन से कठिन तथ्य भी सरल हो जाते हैं।

महापुरुषों के जीवन को जानना, पढ़ना, समझना तथा उनके कार्यों को अपने जीवन में उतारना। कहा गया है - **महाजनो येन गतः सः पन्थाः।**

गीता जी में कहा है - **यद्धा चरति श्रेष्ठं, स्तददेवेतराः जनाः।**

परिवार के किसी भी सदस्य मुझमें, माताजी, बहनों के जीवन में जो अच्छी बातें हैं, उन्हें ही अपनाना बुराइयों को नहीं पकड़ना। अपना निर्माण स्वयं करो। ऊंचा उठो। मृत्यु अन्तिम सत्य है। पहले या बाद में। मैं देहदान के लिए संकल्पित हूँ। यदि हम (माताजी व पिताजी) मृत्यु को भी प्राप्त हो जाते हैं, तो भी गुरुकुल में पढ़ना छोड़ना नहीं स्वामी जी व संगठन का साथ देना। यही मेरी इच्छा है।

“श्रद्धावान लभते ज्ञानं” (गीता जी) श्रद्धा युक्त को ज्ञान प्राप्त होता है। अपनी संस्था तथा आचार्यों में श्रद्धा भाव रखना। **सहारा कम से कम लो किन्तु दूसरों का सहारा बनो।** घर तुमने जितना संगीत सीखा है वहां और बढ़ाते रहना। किसी एक खेल में भी दक्षता प्राप्त करो।

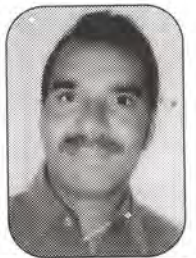
पत्र लम्बा हो गया है। बाकी बातें बाद में। अपने स्वास्थ्य व स्वाध्याय व ज्ञान का ध्यान रखना। **“योग क्षेमं वहामहम्”** तुम्हारे सब मित्रों व अस्वार्थी को नमस्ते कहना।

तुम्हारे पिताजी

लखन राठौर

ग्राम : डाबी, जनपद : सीहोर (म.प्र.)

चलभाष : ९८९३४५१७५६



आर्य समाज के स्थापना के बाद अर्ध शताब्दि तक के सांकेतिक इतिहास जिज्ञासु आर्य पाठकों की अपने अतीत के इतिहास के प्रति रुचिवर्धन हेतु संक्षिप्त लेख जो अपने इतिहास को जानेंगा-समझेगा वह एक नया इतिहास रचेगा भाग - २

(यह लेख आर्य समाज का इतिहास-प्रथम भाग लेखक डा. सत्यकेतु विद्यालंकार से लिया गया है।)

आर्य समाज की स्थापना एवं पृष्ठ भूमि

दिसम्बर १८७४ के प्रारम्भ में स्वामी दयानन्द जी ने गुजरात और काठिचावड़ में प्रचार कार्य शुरू किया। स्वामी जी बम्बई से पहले सूरत गये फिर भडूच, अहमदाबाद, और राजकोट। इन सब नगरों में अपने मन्तव्यों का प्रचार करते हुए स्वामी जी १८७५ के जनवरी मास के अन्त में पुनः बम्बई आ गये थे। दो महीने के लगभग इस काल में उन्होंने जो व्याख्यान दिये जो शास्त्रार्थ किये और शास्त्र चर्चा की इस सब का संक्षेप के साथ भी उल्लेख करना सम्भव नहीं है। समाचार पत्र टाइम्स आफ इन्डिया (४ जनवरी १८७५) में यह छपा की स्वामी दयानन्द जी को न केवल वेदों का ज्ञान है वरंच हिन्दुओं के धर्म ग्रन्थों से भी बड़ा परिचय है। उनमें व्याख्यान देने की शैली अत्युत्तम हैं इसलिए लोग उनके प्रवचनों को सुनने बड़ी संख्या में आते थे। हितैच्छु नामक समाचार पत्र के ७ जनवरी १८७५ अंक में छपा कि पं. दयानन्द जी ने अपने थोड़े दिनों में शिक्षित समाज को जिन्होंने गुजरात में हिन्दू धर्म की ऐसी योग्यता और बुद्धिमता से व्याख्यान नहीं सुना था। निस्सन्देह पं. दयानन्द ही ऐसे मनुष्य हैं जिनकी हिन्दुओं की वर्तमान अधपतित अवस्था के लिये आवश्यकता है।

जब स्वामी दयानन्द जी अहमदाबाद में थे तभी उन्होंने आर्य समाज के नाम से एक संगठन के निर्माण का विचार प्रकट किया था। (७ जनवरी १८७५) में प्रकाशित हुआ कि जिन बुराइयों से हमारा वर्तमान हिन्दू समाज हानि उठा रहा है। उन्हें दूर करने हेतु पं. दयानन्द जी ने आर्य समाज और वैदिक पाठशाला स्थापित करने का प्रस्ताव किया है। आर्य समाज की स्थापना के अपने जिस विचार को स्वामी जी अहमदाबाद में क्रियान्वित नहीं कर सके वह कुछ समय बाद राजकोट में क्रियान्वित हुआ। स्वामी जी ३१ दिसम्बर १८७४ को अहमदाबाद राजकोट पहुंचे थे। वहां उनका धूमधाम के साथ स्वागत हुआ, और अनेक व्याख्यान हुए। राजकोट कठियावाड़ में है, जो स्वामी जी का अपना प्रदेश है। दो साल पूर्व वहां प्रार्थना समाज की स्थापना हो चुकी थी और अनेक शिक्षित व्यक्ति उसकी सदस्यता स्वीकार कर चुके थे, स्वामी जी ने प्रस्ताव किया कि राजकोट में आर्य समाज स्थापित किया जाए और प्रार्थना समाज को ही आर्य समाज में परिवर्तित कर दिया जाए। प्रार्थना समाज के सभी सदस्य सहमत हो गये इस प्रकार प्रथम आर्य समाज की स्थापना हुई। राजकोट में स्थापित आर्य समाज की सदस्य संख्या तीस थी। श्री मणिशंकर जटाशंकर प्रधान और श्री हरगोविन्द दास द्वारकादास मंत्री। स्वामी जी ने आर्य समाज के नियम भी बनाए जिनको छपवा लिया गया था। इसके अधिवेशन नियम पूर्वक होने लगे। पर यह समाज देर तक कायम नहीं रह सका ६ माह में ही इसका अन्त हो गया।

जब स्वामी जी गुजरात कठियावाड़ की यात्रा से लौट कर बम्बई आ

पं. उम्मेदसिंह विशारद

गढ़ निवास मोहकमपुर, देहरादून (उत्तराखण्ड)

चलभाष - ९४११५१२०१९



गये और वहां आर्य समाज की स्थापना की चर्चा फिर से प्रारम्भ हो गयी। और जो आर्य समाज के प्रति मिथ्या प्रचार किया जा रहा था उसका प्रभाव देर तक कायम नहीं रह सका। १७ फरवरी १८७५ के दिन चिटगांव एक सभा का आयोजन किया गया, जिसमें सैकड़ों व्यक्ति उपस्थित थे। राजकृष्ण महाराज नाम के एक सज्जन ने विचार प्रस्तुत किया कि आर्य समाज के नियमों में इस सिद्धान्त का समावेश कर दिया जाए कि जीव और ब्रह्म में एकत्व है। उनका कथन था कि यह सिद्धान्त अधिक लोकप्रिय है। राजकृष्ण महाराज अद्वैतवाद के प्रबल समर्थक थे, और उसके समर्थन में हृदय चक्षु नाम से समाचार पत्र भी प्रकाशित किया करते थे स्वामी दयानन्द जी के कहने पर उन्होंने इस पत्र का नाम आर्य धर्म प्रकाशक रख दिया था। परन्तु आर्य समाज के नियमों में जीव और ब्रह्म की पृथम तत्त्व की बात भी उन्हें सहन नहीं थी। स्वामी जी इस पर सहमत नहीं हुए उनका कहना था कि आर्य समाज की नींव असत्य पर नहीं रखी जा सकती। इस पर राजकृष्ण जी रूठ हो गये और उन्होंने स्वामी जी का विरोध करना शुरू कर दिया। फरवरी १८७५ में आर्य समाज के स्थापित न होने का यही कारण था।

बम्बई में बहुत सारे लोग आर्य समाज की स्थापना करना चाहते थे। गिरगांव रोड पर माणिक जी की बागवाड़ी में एक सभा का आयोजन किया गया, जिसमें आर्य समाज की नियमावली को स्वीकृत कर विधिवत समाज की स्थापना की गई। यह सभा चैत्र शुक्ल ५ शनिवार संवत् १९३२ तदनुसार १० अप्रैल सन् १८७५ को हुई थी। बम्बई में आर्य समाज की विधिवत स्थापना हो जाने पर उन २८ नियमों को भी स्वीकृत किया गया जो अगले दो वर्षों तक आर्य समाजों में मान्य रहे। वर्तमान में आर्य समाज के दस नियम हैं वे सन् १८७७ में लाहौर में बनाये गये थे। बम्बई में निर्धारित आर्य समाज के २८ नियमों में संक्षेप के साथ दृष्टिपात उस महान आन्दोलन को सुचारू रूप से समझने के लिये उपयोगी है। जिसका प्रारम्भ स्वामी दयानन्द सरस्वती जी आर्य समाज की स्थापना द्वारा कर रहे थे। इन नियमों में आर्य समाज संगठन की रूप रेखा दी गई है। आज भी सब आर्यों का मानना व उसके अनुसार आचरण करना आवश्यक है।

बम्बई में निर्धारित आर्य समाज के २८ प्रथम नियम

१. आर्य समाज का सब मनुष्यों के हितार्थ होना आवश्यक है।
२. इस समाज में मुख्य स्वतः प्रमाण वेदों का ही माना जायेगा। साक्षी के लिये वेदों के ज्ञान के लिये तथा आर्य इतिहास के लिये मतपथादि ४ ब्राह्मण, ६

वेदांग, ४ उपवेद, ६ दर्शन, ११२७ वेदों की शाखा, वेद आख्यान, आर्य संस्कृत ग्रन्थों का भी वेदानुकूल होने से गौण प्रमाण माना जायेगा।

३. इस समाज में प्रतिदेश के मध्य एक प्रधान समाज होगा और अन्य समाज शाखा-प्रशाखा होंगे।

४. अन्य सब समाजों की व्यवस्था प्रधान समाज के अनुकूल रहेगी।

५. प्रधान समाज के वेदानुकूल संस्कृत और आर्य भाषा में नाना प्रकार के सदुपदेश के पुस्तक होंगे और एक आर्य प्रकाश पत्र यथानुकूल आठ-आठ दिन में निकलेगा। यह सब समाजों में प्रवृत्त किये जायेंगे।

६. हर एक समाज में एक प्रधान पुरुष और दूसरा मंत्री तथा अन्य पुरुष और स्त्री सभासद होंगे।

७. प्रधान पुरुष इस समाज की यथावत व्यवस्था पालन करेगा और मंत्री सबके पत्रों का उत्तर तथा सबके नाम व्यवस्था लेख करेगा।

८. इस समाज में सत्पुरुष, सत्यनीति, सत्याचरणी मनुष्यों के हित कारक समाजस्थ किये जायेंगे

९. जो ग्रहस्थ ग्रह-कृत्य से अवकाश प्राप्त हो सो जैसा घर के कामों में पुरुषार्थ करता है, उससे अधिक पुरुषार्थ इस समाज की उन्नति के लिये करे और विरक्त तो नित्य ही इस समाज की उन्नति करे अन्यथा नहीं।

१०. हर आठवें दिन प्रधान मंत्री और सभासद समाज स्थान में इकट्ठे हों और सब कामों से इस काम को मुख्य जाने।

११. इकट्ठे होकर सर्वार्थ स्थिरचित्त हो, परस्पर प्रीति से पक्षपात छोड़ कर प्रश्नोत्तर करें, फिर सामवेदादि गान परमेश्वर सत्यधर्म, सत्यनीति तथा सत्योपदेश के सम्बन्ध में बाजा आदि के साथ हो और इसी विषय पर मन्त्रों के अर्थ और व्याख्यान पुनः गान फिर व्याख्यान और गान हो इत्यादि।

१२. हर एक सभासद न्यायपूर्वक पुरुषार्थ से जितना धन प्राप्त करें, उसमें से आर्य समाज, आर्य विद्यालय और आर्य पत्र प्रकाश के प्रचार और उन्नति के लिये आर्य समाज के धनकोष में एक प्रतिशत प्रीति पूर्वक देवें, अधिक देने के अधिक धर्म फल। इस धन का इन्हीं विषयों में व्यय होवे और जगह नहीं।

१३. जो मनुष्य इन कार्यों की उन्नति और प्रचार के लिये जितना प्रयत्न करे उसका उत्साह के लिये यथा योग्य सत्कार होना चाहिए।

१४. इस समाज में वेदोक्त प्रकार से हर एक स्तुति, प्रार्थना, और उपासना अद्वितीय परमेश्वर की ही करने में आयेगी। अर्थात् निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, दयालु, सर्वजगपिता, सर्वजगन्माता, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सचिदानन्द आदि लक्षणयुक्त सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर-अमर, अभय, नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त स्वभाव, अनन्त सुखप्रद, धर्मार्थकाम मोक्षप्रद इत्यादि विशेषणों से परमात्मा की ही स्तुति उसका कीर्तन, प्रार्थना, उससे श्रेष्ठ कार्यों में सहाय चाहना, उपासना, उसके आनन्द स्वरूप में मग्न हो जाना। से पूर्वोक्त निराकार आदि लक्षण वाले की ही भक्ति करनी, उसके सिवाय किसी और की कभी नहीं करनी।

१५. इस समाज में निषेकादि अन्त्येष्टि पर्यन्त संस्कार वेदोक्त किये जायेंगे।

१६. आर्य विद्यालय में वेदादि सनातन आर्षग्रन्थों का पठन-पाठन कराया

जायेगा और वेदोक्त रीति से ही सत्य शिक्षा सब पुरुष और स्त्री के सुधार की होगी।

१७. इस समाज में स्वदेश के हितार्थ दो प्रकार की शुद्धि के लिए प्रचलन किया जायेगा एक परमार्थ दूसरी लोक व्यवहार। इन दोनों का शोधन और शुद्धता की उन्नति तथा सब संसार के हित की उन्नति की जायेगी।

१८. इस समाज में न्याय वही माना जाएगा जो पक्षपात रहित अर्थात् प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से परीक्षित सत्य धर्म वेदोक्त होगा, इसके विपरीत को यथा शक्ति न माना जायेगा।

१९. इस समाज की ओर से श्रेष्ठ विद्वान सर्वत्र सदुपदेश करने के लिए समयानुकूल भेजे जायेंगे।

२०. स्त्री और पुरुष दोनों के विद्याभ्यास के लिए हर एक स्थान में यथाशक्ति अलग-अलग जायेंगे। स्त्रियों के लिए पाठशाला में अध्यापन और सेवा प्रबन्ध स्त्रियों द्वारा ही किया जायेगा, और पुरुष पाठशाला पुरुषों द्वारा इसके विरुद्ध नहीं।

२१. उन पाठशालाओं की व्यवस्था प्रधान समाज के अनुकूल पालन की जाएगी।

२२. इस समाज के प्रधान आदि सब सभासद परस्पर प्रीति के लिए अभिमान, हठ, दुराग्रह और क्रोध आदि सब दुर्गुण छोड़ कर उपकार सुहृदयता में सबसे सबका निर्भर होकर स्वात्मवत सप्रीति करनी होगी।

२३. विचार समय सब व्यवहारों में न्याययुक्त सब हित की जो सत्य बात भली प्रकार विचार से ठहरे उसी को सब सभासदों को प्रकट करके मानी जाए, इसके विरुद्ध न मानी जाए। इसी का नाम पक्षपात छोड़ना है।

२४. जो पुरुष इन नियमों के अनुकूल आचरण करने वाला धर्मात्मा सदगुणी हो उसको उत्तम समाज में प्रविष्ट करना, उसके विपरीत को साधारण समाज में रखना और अत्यन्त प्रत्यक्ष दुष्ट को समाज से निकाल ही देना, परन्तु यह काम पक्षपात से नहीं करना, बल्कि यह दोनों बातें श्रेष्ठ सभासदों के ही विचार की जायें, अन्य प्रकार से नहीं।

२५. आर्य समाज आर्य विद्यालय आर्य प्रकाश पत्र और आर्य समाज का अर्थ धन कोष इन चारों की रक्षा और उन्नति प्रधानादि सब सभासद तन-मन-धन से सदा करे।

२६. जब तक नौकरी करने और कराने वाला आर्य समाजस्थ मिले तब तक और की नौकरी न करें और न किसी को नौकर रखें, वे दोनों स्वामी सेवक भाव से यथावत बरतें।

२७. जब विवाह पुत्र-जन्म महालाभ वा मरण व कोई समय दान व धन व्यय करने का हो तब आर्य समाज के निमित्त धन आदि दान किया करें। ऐसा धर्म का काम और कोई नहीं है। इस निश्चय को जानकर इसको कभी न भूलें।

२८. इन नियमों में कोई नियम नया लिखा जायेगा या कोई निकाला जायेगा व न्यूनाधिक किया जायेगा सो सब श्रेष्ठ सभासदों की विचार रीति से सब श्रेष्ठ सभासदों को विदित करके ही यथा योग्य करना होगा। ●



ज्ञान का सागर चार वेद, यह वाणी है भगवान की। इससे मिलती सब सामग्री, जीवन के कल्याण की॥

महर्षि दयानन्द के भाष्यानुसार- ऋग्वेद ज्ञानागार के कुछ मोती

अथ ऋग्वेद पञ्चम मण्डलम्

गतांक से आगे...

सूक्त मन्त्र क्र.	विषय	सूक्त मन्त्र क्र.	विषय
५२	१५ से १७ तक फिर मनुष्य विद्वानों के संग से विद्याओं को प्राप्त हो	२ व ३	वायु गुणों के विषय में
५३	१ अब मनुष्य क्या जाने	४ से ८ तक	विद्वद्विषय के विषय में
२	फिर मनुष्य कैसे पूछ के क्या जाने	६०	१ से ५ व ७ फिर मनुष्यों को क्या साधना चाहिये
३ व ६	फिर मनुष्य क्या करें	६	फिर मनुष्यों को परस्पर कैसे वर्तना चाहिये
४	मनुष्य पुरुषार्थ से किस-किस को प्राप्त होवे	८	विद्वानों की सेवा करनी चाहिये
५ व ११ से १६	फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये	६१	१ से ३ तक प्रश्नोत्तरों से मरुदादिकों के गुणों का वर्णन
७	फिर मनुष्यों को क्या जानना चाहिये	४ व ५	विद्वानों के उपदेश के विषय में
८	फिर विद्वानों को क्या उपदेश देना योग्य है	६ व ७	स्त्री के पुरुषार्थ उपदेश के विषय में
९ व १०	फिर विद्वान जन को मनुष्यों के अर्थ क्या इच्छा करनी चाहिये	८ व १५ से १९	विद्वद्विषय के विषय में
५४	१ विद्वानों को कैसे वर्तना चाहिये	९ से ११ व १३	स्त्री पुरुष के विषय में
२	फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये	१२ व १४	फिर उपदेश के विषय में
३ व ८	फिर मनुष्य कैसे हों	६२	१ सूर्य गुणों के विषय में
४ व ५	फिर मनुष्यों को क्या जानना चाहिये	२ से ६, ८ व ९	मित्रावरुण के गुण
६ व १०	मनुष्यों को कैसे वर्तना चाहिये	७	विद्युत विद्या के विषय में
७	ईश्वर कैसा है	६३	१, ६ व ७ मित्रावरुण विद्वद्विषय सम्बन्धी
९	मनुष्यों को कैसे उपकार लेना चाहिये	२ से ४ तक	मित्रावरुण वाच्य राजा अमात्य विषय
११ व १२	फिर मनुष्य कौन-कैसे हो	५	मित्रावरुण वाच्य शिल्प विद्या के विषय में
१३	फिर मनुष्यों को क्या इच्छा करनी चाहिये	६४	१ से ५ तक मित्रावरुण पद वाच्य विद्वानों के गुण
१४ व १५	राजादि को से कौन-कौन रक्षा पाने योग्य है	६ व ७	फिर विरोध छोड़ धन प्राप्ति के विषय में
५५	१ मनुष्य कैसे वर्ते	६५	१ से ६ तक मित्रावरुण पद वाच्य पढ़ने-पढ़ाने वाले व उपदेश
२ से १० तक	फिर मनुष्य कैसे हो	६६	१ से ५ मनुष्य क्या करें
५६	१ से ३ तक विद्वानों के उपदेश से मनुष्य और वायु के गुणों को	६	मनुष्यों को न्याय से राजा की रक्षा करनी चाहिये
४ व ५	जानकर फिर मनुष्य क्या करें।	६७	१ व २ मनुष्यों को किसके तुल्य क्या करना चाहिये
६ व ७	विद्वानों के विषय में	३	मनुष्यों को कैसे वर्तना चाहिये
८	अग्नि विद्या के उपदेश	४	फिर विद्वान कैसे होकर क्या करें
८	फिर वायु गुणों के विषय में	५	मनुष्य विद्वानों से किस प्रकार विद्या ग्रहण करें
९	फिर विद्वानों के उपदेश के विषय में	६८	१ अब मनुष्यों को परस्पर क्या करना चाहिये
५७	१ रुद्र के गुणों के विषय में	२	मनुष्यों को यहां कैसे होना चाहिये
२ से ५ तक	मरुद् के गुणों के विषय में	३	फिर राज्य कैसे उन्नति को प्राप्त करना चाहिये
६	मरुद् विषय में यान चलाने के फल	४	विद्वानों के सदृश इतरजनों के साथ कैसा वर्तव्य करना चाहिये
७	फिर मरुद् विषय के विषय में	५	फिर मनुष्यों को क्या जानकर, क्या करना चाहिये
८	फिर मरुद् विषयक विद्वानों के गुणों के विषय में	६९	१ व २ इस संसार में मनुष्यों को क्या जानकर क्या करना चाहिये
५८	१ वायु गुणों के विषय में	३	मनुष्यों को निरन्तर प्रयत्न करना चाहिये
२ व ३	फिर मनुष्य क्या करें	४	मनुष्यों को क्या-क्या जानना चाहिये
४	फिर मरुद् के गुणों को कहते हैं	७०	१ से ३ तक मनुष्यों को क्या-क्या करना चाहिये
५ व ६	विद्वानों के उपदेश गुणों के विषय में	४	उत्तमों को किसी पुरुष से भी दान कभी न ग्रहण
७ व ८	फिर विद्वद्विषय के विषय में		(शेष आगामी अंक में...) करना चाहिये
५९	१ विद्वद् गुणों के विषय में		

- पं. सत्यपाल शर्मा -

आर्य समाज-देहरी, जिला- मन्दासौर म.प्र.

चलभाष : ८४३४७४६४७४



सृष्टि निर्माण और शान्तिपाठ



— नरेन्द्र आहूजा 'विवेक' —

६०२, जी. एच. ५३, सैक्ट. २०, पंचकूला

चलभाष : ०९४६७६०८६८६

सृष्टि के निर्माण के सम्बन्ध में आधुनिक विज्ञान ने लम्बी खोजबीन के बाद कुछ मत प्रस्तुत किये। वैज्ञानिक मतों के अनुसार सृष्टि का निर्माण एक खगोलिक विस्फोट से प्रारम्भ हुआ और जब यह विस्फोट शान्त हुआ तो अन्तरिक्ष में विभिन्न सौरमण्डल और सौरमण्डलों में ग्रह, उपग्रह अपनी-अपनी कक्षाओं में स्थापित हो गए। इन ग्रहों में हमारा ग्रह पृथिवी भी शामिल था। सब में समन्वय स्थापित होने के बाद हमारे ग्रह पृथिवी में भी व्यवस्था स्थापित हुई, शान्ति हो गई और पृथिवी भी सुखकारी निरूपद्रवी हो गई। पृथिवी के शांत होने के बाद इसके विशाल जल भण्डार समुद्र शान्त हो गए जल व प्राण शान्त अर्थात् व्यवस्था में आने बाद हमारे ग्रह पर औषधियां सुखदायी बन गई और साथ ही हमारे लिए वनस्पतियां अन्न आदि पैदा हो गई। इस प्रकार इस क्रम में सृष्टिकर्ता परमपिता परमेश्वर ने सृष्टि का निर्माण किया।

कोई भी कार्य बिना कारण और कर्ता के संभव नहीं। वैज्ञानिक थ्योरी में जिस खगोलीय विस्फोट की बात की जाती है वह स्वतः हो गया हो ऐसा कदापि संभव नहीं है और फिर इस खगोलीय विस्फोट के उपरांत सभी आकाशगंगाओं, सौरमण्डलों, ग्रहों उपग्रहों का द्यौः शान्ति के उपरांत स्वतः सुव्यवस्थित सामंजस्य हो जाना केवल किसी शक्तिमान सृष्टिकर्ता के कारण ही संभव हो सकता है। उदाहरण के लिए कितनी भी कोशिश कर लें और कम्प्यूटर या छापेखाने में अचानक उछाले ये उछले शब्द किसी ग्रन्थ को नहीं छाप सकते। केवल संयोग मात्र से इतनी बड़ी सृष्टि का निर्माण होना असंभव है। वैसे भी **हिरण्यगर्भ....** मन्त्र से स्पष्ट हो जाता है कि सृष्टि के निर्माण से पूर्व वह परमपिता परमेश्वर विद्यमान था और ईश्वर ने ही इस सृष्टि का निर्माण किया है। सृष्टि निर्माण की पूरी प्रक्रिया वैज्ञानिकों द्वारा सिद्ध किए जाने से वर्षों पूर्व यजुर्वेद के छतीसवें अध्याय के सत्रहवें मंत्र जो कि शान्तिपाठ के नाम से सुविख्यात है स्पष्ट रूप से दी गई है.... **द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्मा शान्तिः सर्वे शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।**

इस शान्ति मन्त्र में शान्ति का अर्थ समन्वित या सुव्यवस्थित होना है। शम धातु में क्तिन् प्रत्यय लगाकर स्त्रीलिंग शान्ति शब्द बनता है। अब सृष्टि निर्माण प्रक्रिया की वैज्ञानिक थ्योरी को शान्तिपाठ के क्रम की कसौटी पर कस कर निष्कर्ष निकालते हैं। इसके दस अवयव हैं....

१. **द्यौः शान्तिः** अर्थात् खगोलिक विस्फोट के उपरांत सभी आकाशगंगाओं, सौरमण्डलों का व्यवस्थित होकर समन्वित हो जाना।
२. **अन्तरिक्ष शान्तिः** अर्थात् इन सभी सौरमण्डलों के ग्रहों, उपग्रहों का व्यवस्थित होकर गुरुत्वाकर्षण शक्ति से एक विशेष मानयुक्त दूरी पर सूर्य के चारों ओर भ्रमण करना जैसे आकाश में पक्षी उड़ते हैं जो कि ईश्वर स्तुतिप्रार्थनोपसना के पांचवें मंत्र **येन द्यौरूपा....** में स्पष्ट रूप से पुनः आया है।
३. **पृथिवी शान्तिः** अर्थात् अब हमारे अपने ग्रह पृथिवी के सुव्यवस्थित होने अर्थात् अपनी धुरी पर चक्कर लगाते हुए दिन और रात्रि का निर्माण करने की बात सिद्ध होती है।

४. **पृथिवी के शान्त होने के बाद आपः शान्तिः** अर्थात् जल वा प्राण का सुव्यवस्थित या शांत हो जाना। वैसे भी क्रम में जल, पृथिवी के बाद ही देरी से गर्म तथा देरी से ठंडा होता है। इसीलिए सृष्टि निर्माण क्रम को दर्शाते शान्ति मन्त्र में पृथिवी शान्ति के उपरांत ही आपः शान्ति आया है।

५. **औषधयः शान्तिः** अर्थात् पृथिवी पर उत्पन्न होने वाली सोमलता आदि औषधियां शान्त व सुव्यवस्थित हों यानी पृथिवी पर रहने वाले जीवों के लिए सृष्टिकर्ता ईश्वर ने औषधियों का भी निर्माण कर दिया।

६. **वनस्पतयः शान्तिः** इसी क्रम में औषधियों के उपरांत अब वनस्पतियों का निर्माण पृथिवी पर रहने वाले जीवों विशेष रूप से मनुष्यों के लिए ईश्वर द्वारा किया गया।

७. **विश्वेदेवाः शान्तिः** अर्थात् ईश्वर ने इस सृष्टि में समस्त दिव्य पदार्थ सुव्यवस्थित कर दिए।

८. **ब्रह्मा शान्तिः** करते हुए ईश्वर ने सृष्टि के समस्त प्राणियों के लिए एक नियमावली संहिता के रूप में ब्रह्म विद्या अर्थात् वेद ज्ञान ईश्वरीय वाणी के रूप में प्रदान किया ताकि सृष्टिकर्ता ईश्वर द्वारा निर्मित सृष्टि में रहने वाले सभी प्राणी विशेष रूप से मनुष्य सुव्यवस्थित ढंग से शान्तिपूर्वक रह सके।

९. **सर्वे शान्तिः** इतना करके ईश्वर ने सम्पूर्ण सृष्टि व्यवस्था का निर्माण करते हुए उसे समन्वित कर दिया और कहा सर्वम् शान्ति अर्थात् अब सब कुछ सुव्यवस्थित समन्वित है।

१०. **शान्तिरेव शान्तिः** इतना ही नहीं अपितु आने वाले काल में भी सब कुछ सुव्यवस्थित रहे, समन्वित रहे ऐसा सुनिश्चित करने के लिए कभी भंग न होने वाली व्यवस्था का निर्माण कर दिया और कहा शान्तिः एवं शान्तिः इस सभी की सुव्यवस्था भी समन्वित है अर्थात् शान्ति की भावना भी स्वयं शान्तियुक्त है।

परन्तु अंत में ग्यारहवें स्थान पर **सा मा शान्तिरेधि** कहकर उस सृष्टिकर्ता ईश्वर ने इस सृष्टि उपयोग व उपभोग करने वाले समस्त प्राणियों को समन्वित सुव्यवस्थित व शान्त रहने का आदेश दिया और इस मन्त्र के माध्यम से शान्तिपाठ करते हुए हम मनुष्य उस परमपिता परमेश्वर से यही प्रार्थना करते हैं कि हे परमपिता परमेश्वर! जैसी शान्ति समन्वय सुव्यवस्था इस मन्त्र में आई उपरोक्त दस अवयवों में सृष्टिक्रम निर्माण के समय से ही है वैसी ही शान्ति, समन्वय, सुव्यवस्था मुझमें भी स्थापित हो। यदि ये सुव्यवस्था, समन्वय व शान्ति हम मनुष्य अपने अंदर स्थापित नहीं कर पाते तो हमें बाहर भी इस सृष्टि क्रम में शान्ति प्रतीत नहीं होती। इसलिए आवश्यक है कि सृष्टिकर्ता ईश्वर ने जैसा समन्वय शान्ति सृष्टि निर्माण के सभी अवयवों में स्थापित की है वैसी ही सुव्यवस्था समन्वय व शान्ति हमारे अंदर भी स्थापित हो। ●

वेद सुधा

- पं. सत्येन्द्र आर्य -

आर्य समाज पिपलिया मण्डी

जनपद : मन्दसौर म.प्र.

चलभाष : ९४०६६ ७५४२३



मनुर्भव जनया दैव्यं जनम् अर्थात् मानव तू मानव बन और दिव्य सन्तानों का निर्माण कर वेद की यह सूक्ति हमारा मार्गदर्शन कर रही है। एड़ी से चोटी तक दिखने वाले मानव को, मात्र इसलिए मनुष्य न कहा जा सकता है कि उसका शरीर मनुष्य का शरीर है। मानवता, मनुष्यता ही उसके मनुष्य होने का प्रमाण है। आर्ष ग्रन्थों की मान्यता रही है कि -

प्रत्यक्षं परोक्षं च परेषामाचरेत्प्रियम् । अर्थात् मनुष्य उसको कहते जिसका आचरण प्रत्यक्ष में भी और परोक्ष में भी प्रिय लगने वाला हो। किन्तु संस्कारों और सद्शिक्षकों द्वारा ही ऐसा सम्भव हो सकता है।

सभी मत पंथ सम्प्रदाय वाले हिन्दू बन, ईसाई, यहूदी या मुसलमान बन, जैन-बौद्ध या और कुछ बनने की प्रेरणा देते हैं किन्तु वेद की विशेषता देखिए यह मनुष्य बनने का उपदेश देता है। प्रभु की कल्याणी वेद वाणी सदुपदेशों का भंडार है। एक स्थान पर वेद का कथन है कि

माहिर्भूर्मा पृदाकुः... अर्थात् हे मनुष्य! तुझे मनुष्य बनना है। सर्प नहीं बनना है, भेड़िया नहीं बनना है। सांप कुटिलता का प्रतीक है। जीवन में कुटिलता युक्त पाप कर्म से बचें, वाणी और व्यवहार में जहरीलापन न हो। भेड़िया क्रोध का प्रतीक है, क्रोध विवेक को नष्ट कर देता है। क्रोध को प्रेम से जीतो (सबके साथ प्रेम पूर्वक व्यवहार करो) **क्रोधो नास्ति समोरिपुः**। क्रोध के समान कोई शत्रु नहीं होता। मनुष्य बनने के लिए ईश्वर प्रदत्त वेद का दिव्य ज्ञान हमारा मार्ग प्रशस्त कर रहा है। मत पंथ सम्प्रदाय और अनार्ष तथाकथित ग्रन्थों ने मानव मस्तिष्क को भ्रमित किया है। आज के पश्चात्य संस्कृति में हमें आपस में लड़ाना सिखाया गया है। वेद कहता है **मिथो विधनाना उपयन्तु मृत्युम्** अथर्व वेद के इस मंत्र में चेतावनी दी गई है कि आपस में लड़ने वाले मृत्यु को प्राप्त होते हैं। आपस की फुट से कौरव और पाण्डव नष्ट हो गये। अतः फुट को त्यागो और खरबूजे की भान्ति मिल जाओ यही फलने-फूलने और सर्व विश्व सुख शान्ति और समृद्धि का मार्ग है। मनुष्य परमेश प्रभु की अनुपम कृति है यह मनुष्य योनि ईश्वर का उत्कृष्ट उपहार है। **बड़े भाग मानुष तन पावा, सुर दुर्लभ सब ग्रंथहि गावा**। स्वयं प्रभु ने मानव शरीर की महिमा मण्डित किया है- **अष्टा चक्र नव द्वारा देवानां...** प्रभु की इस सर्वश्रेष्ठ कृति मानव शरीर में आठ चक्र और नौ दरवाजे हैं। इसे अयोध्या अर्थात् अजय कहा गया है। पाँच प्राण पाँच उप प्राण कर्मेन्द्रियां ज्ञानेन्द्रियां, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, जीव और ब्रह्मा का स्थान। प्रभु की इस सुन्दर रचना को एक अदभुतालक्य कहा जा सकता है। कैसी वैज्ञानिक रचना है मानव मस्तिष्क को ही लीजिये इसमें १२ अरब कोशिकाएँ हैं। ७२ करोड़ ७२ लाख १० हजार २ सौ एक नाड़ीयाँ। इसमें हड्डियों का जोड़ माँस का लेपन जीव के जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति को भोगने के लिए स्थान विशेष का निर्माण किडनी, लीवर सब कुछ आश्चर्यजनक है। प्रभु के इस अद्भुत कौशल की प्रशंसा में समूचा ज्ञान और विज्ञान सक्षम नहीं है। परमेश प्रभु आदेश देते हैं **ओम् क्रतो स्मर** हे कर्मशील

मनुष्य! तू कर्म करता हुआ पुरुषार्थ करते हुए संसार का ताना-बाना बुनते हुए प्रभु का स्मरण किया कर। मानव जीवन की सार्थकता के लिए हमें जीवन जीने की कला सीखना होगी। परमेश प्रभु ने अपने वेद के सुदिव्य ज्ञान में बताया है कि मनुष्य बनने के लिए क्या वर्जनीय है अर्थात् हमें क्या नहीं करना चाहिए जिन कामों, व्यवहारों और खान-पान से मानवता कलंकित होती है हमारे कुल वंश की प्रतिष्ठा को आँच आती है माता पिता और आचार्य की गरिमा नष्ट होती है ऐसे ७ कर्म ऋग्वेद में वर्जित बताये हैं।

१. चोरी करना : लोभ वश मन-वचन और कर्म से दूसरों के पदार्थों को उठाने का नाम चोरी है चोरी की प्रवृत्ति एक बड़ा दोष है और अनेक अनर्थ और निःकृष्ट जीवन की जननी है उस बच्चे की कहानी जो एक विद्यालय से एक दवात चुरा लाता है फिर उसकी माता की प्रेरणा से काफी और पुस्तकें, रुपए पैसे चुराकर लाने वाला एक डाकू बन जाता है और बड़ी-बड़ी चोरी डकैती हत्या जैसे विनाशकारी वारदातों को जन्म देता है अतः चोरी करने जैसे कुकृत्य से बचना है परंतु चोरी कहते किसे हैं इसे समझना आवश्यक है। बढ़िया माल बताकर ग्राहक को घटीया माल देना चोरी है। कम तोलना चोरी है, मिलावट करना चोरी है। कई प्रकार के अनर्थ होते हैं इस एक ही दोष के कारण। अष्टाङ्ग योग के प्रणेता महर्षि पतंजलि ने यम की व्याख्या में चोरी के परित्याग का भी उपदेश दिया है आध्यात्मिक जीवन में भी यह दोष बाधक है अतः चोरी मत करें

२. व्यभिचार : अत्यधिक घृणित और पाप कर्म व्यभिचार है। वैदिक आदर्श और सनातन परम्पराओं में अपनी पति और पत्नी को छोड़कर सब में माता-पिता और भाई बहन के पवित्र भावनायें रखना धर्म माना है यही धर्म सदाचार है। मातृवत् परदारेषु कहकर शास्त्रकारों ने चरित्र की पवित्रता बनाये रखने का आदेश दिया है। सामाजिक जीवन में व्यभिचार एक अभिशाप है सदाचार हमारे जीवन की अनुपम उपलब्धि है जितेंद्रियता महर्षि मनु की मान्यता के अनुसार तपस्वी जीवन है।

वनेषु दोषा प्रभवन्ति रागिणाम्, गृहेषु पन्देन्द्रिय निग्रहः तपः ।

रावण वध की सूचना जब रानी मन्दोदरी को दी गई वह हतप्रभ हो गई थी। वीर पराक्रमी योद्धा अपने पति की मृत्यु के समाचार से विचलित हो गई। उसने सोचा कि युद्ध में शत्रु को पराजित करने के बड़े-बड़े हथियार अस्त्र-शस्त्र होते हुए अन्तोतगत्वा राम के पास ऐसा कौन सा अस्त्र-शस्त्र रहा जिसके कारण मेरे पति का वध हो गया। उसने उन शस्त्रों को देखने की बात कही। तत्काल रामा दल में यह खबर फैल गई तो अस्त्र-शस्त्रों को समूह रूप

में एक जगह ढेर लगा दिया और महारानी मन्दोदरी के आगमन पर सारे सैनिक कतार बन्द नीचे दृष्टि रखते हुए खड़े रहे। रामादल के अनुशासित सैनिकों ने आंख उठा कर के भी मन्दोदरी और उसके साथ चल रहे महिला समुदाय को नहीं देखा। महारानी अभी हथियारों के एकत्रित समूह तक नहीं पहुंची और वापस हो गई पूछने पर कहा कि मुझे उन हथियारों को नहीं देखना है ऐसे हथियार तो मेरे शस्त्रागार में जंग खा रहे हैं। मैंने उस हथियार चारित्रिक हथियार को देख लिया है जिससे मेरे पति का वध हुआ। यह है सदाचार की महिमा। मानस प्रणेता एक स्थान पर लिखते हैं कि **पर धन पत्थर मानिये पर त्रीया मात समान इतने पर भी हरी ना मिले तो तुलसीदास जमान।**

प्रभु प्राप्ति का साधन है सदाचार। अतः जीवन जीने की कला है व्यभिचार सूक्त और सदाचार युक्त जीवन ही जीवन है। भगवान मनु एक स्थान पर कहते हैं

दुराचारोहि पुरुषो लोके भवति निन्दितः

दुःख भागी च सततं व्याधितो अल्पायु रेव च

सदाचारी व्यक्ति तो सम्मान प्राप्त करता है आरोग्यता की परिधि में रहते हुए दीर्घायु को प्राप्त करता है महर्षि मनु के अनुसार दुराचारीयों की दुर्गति होती है और सर्वत्र उनकी निन्दा। विवाह संस्कार में चरित्र की पवित्रता बनाये रखने का पर्याप्त उपदेश दे दिया जाता है आये दिन प्रिन्ट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में समाचार आते रहते हैं चरित्र को लेकर पति-पत्नी के बीच सन्देह की दीवार खड़ी हो जाने से न केवल उनका दाम्पत्य जीवन खतरे में पड़ जाता है अपितु घर उजड़ जाते हैं उनके कुल वंश कलंकित हो जाते हैं अतः व्यभिचार से बचो।

३. प्रभु की कल्याणी वेद वाणी तीसरा उपदेश देती है जुआ मत खेलो: यह दोष भी जीवन के लिए अभिशाप है। जुआरियों के लिए ऋग्वेद में पूरा एक सूक्त है जिसमें कहा गया है कि जुआरी की स्त्री सदैव दुःखी रहती है परिवार अभावग्रस्त रहता है इतिहास प्रमाण है कि जुए के कारण राजा नल नष्ट हो गया। इसी दोष का वीभत्स परिणाम महाभारत में देखने को मिलता है युधिष्ठिर जी लम्बे समय तक जंगलों की खाक छानते रहे मारे-मारे फिरते हैं। वेद का उपदेश है जुआ मत खेलो। सुख-शान्ति और समृद्धि के लिए कृषि करो। महर्षि दयानन्द ने मानव जाति की इस नरम नस को टटोला और कहा वेदों की ओर लौटो। कौन सुने अच्छी बातों को आज वेद धर्म की बड़ी चर्चा है **वेदोऽखिलो धर्म मूलम** का नारा दिया जाता है किन्तु दुर्भाग्य से इस कलंक का अन्त नहीं हो रहा है। संप्रान्त परिवारों में दीपावली जैसे पवित्र त्यौहार पर जुआ खेलने के विनाशकारी कुकृत्य की जानकारीयां प्राप्त होती है अतः वेद के उपदेश के अनुसार जुआ मत खेलो चूंकि मानव जीवन अनमोल है इसकी सुरक्षा और गरिमा के लिए वेद का अगला उपदेश है।

४. कठोर भाषण मत करो : वेद हमें पारस्परिक वार्तालाप में किसी भी प्रकार की कठोरता न हो इसके लिये भी सचेत करता है। अथर्व वेद को भक्त अपना संकल्प प्रकट करता है कि मैं जो कुछ भी बोलुं मीठा ही बोलुं। तुलसी

मीठे वचन से सुख उपजे चारों ओर। वाणी की मधुरता से पराये भी अपने हो जाते हैं और कठोरता से अपने भी पराए हो जाते हैं। **एक बार वाणी और पगड़ी का संवाद हुआ पगड़ी ने वाणी से कहा मेरे ऊपर दया दृष्टि बनाए रखो। क्यों? इसलिए कि तुम तो बोल कर अन्दर घुस जाती हो और जूते मेरे ऊपर पड़ते हैं।** कठोर भाषण करने वालों से एक उर्दू के शायर ने ठीक ही कहा है कि **कुदरत को नापसन्द है शख्ती** बयान में, इससे नहीं लगाई है **हड्डी जुबान में।** महाभारत कार ने कहा कि **सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्** अर्थात् सत्य भी बोलो तो उसे प्रिय बनाकर कठोर बनाकर नहीं। बोलचाल में भी हम अन्धे को अन्धा कह कर नहीं बुलाते हैं कहते हैं कि सूरदास आओ यह है कठोर और मीठी भाषा बोलने का उपदेश। कहते हैं कि तलवार का घाव ठीक हो जाता है किन्तु वाणी का घाव नहीं भरता है। वाणी तो प्रभु का वरदान है इसे देवी शक्ति बनाने के लिए पारस्परिक मुस्कुराहट बिखेरते हुए हंसते हुए प्रिय भाषा में वार्तालाप करें। जिस वेद मंत्र पर हम विचार कर रहे हैं उसमें अगला उपदेश है कि **नशा मत करो** नशा नाश का पर्यायवाची है। जिसे नष्ट ही होना है वह नशा करता है। नशा की बात आती है तो शराब पीना यह बहुत बुरी बात है। इसके सेवन करने वाले का स्वास्थ्य चौपट हो जाता है। बुद्धि नष्ट हो जाती है और संसार में ऐसा कौन सा कुकर्म है जिसका करने वाला शराबी ना हो। सब पापों की जड़ है शराब। दुराचार हो या हत्या, डकैती जैसे जघन्य अपराध इन सब के मूल में है शराब पीना। शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा ये सब के सब मदिरापान से दूषित होते हैं। गिलासों में जो डूबे न सुधरे कभी बची जिन्दगानी में, हजारों बह गये इन बोतलों के बन्द पानी से।

आर्थिक बर्बादी का तो कहना ही क्या। एक सदी जुकाम और खांसी के रोगी को शराबी ने सलाह दी कि मेरे पास आओ मैं एक घूंट दवा के रूप में शराब पीला देता हूँ खांसी चली जायेगी, रोगी ने आश्चर्य से क्या कह रहे हो ? शराबी ने कहा कि सन्देह की क्या बात है मेरी ४०० बीघा जमीन इस शराब से चली गई तो तेरी सदी खांसी नहीं जायेगी। शरीर के महत्वपूर्ण हृदय, फेफड़े, लीवर आदि कल पुर्जे को खोखला कर देने वाला यह मदिरा पान शीघ्र बन्द कर देना चाहिये एक प्रेरक दृष्टान्त के साथ इस प्रसङ्ग को विराम देता हूँ। एक सेठ ने अपने नौकर को शराब लेने भेजा। नौकर बुद्धिमान था वो अपने स्वामी को शिक्षा देना चाहता था। वह शराब लेकर मालिक के पास पहुंचा कहने लगा सेठ जी शराबी मांसाहारी भी होता है अतः मैं मांस भी ले आया हूँ और शराबी मांसाहारी के साथ-साथ व्यभिचारी भी होता है अतः मैं वारांगना भी साथ ले आया हूँ क्योंकि इतना सब कुछ करने वाला रोगी भी अवश्य होता है अतः मैं डॉक्टर को भी साथ ले आया हूँ चूंकि कितनी भी चिकित्सा करें ऐसा व्यक्ति शीघ्र मर भी जाता है अतः मैं कफन भी ले आया हूँ। एक सांस में अपने हितैषी नौकर की यह बातें सुनकर सेठ होंश में आ गया और प्रज्ञा कर ली कि मैं शराब नहीं पिउंगा। शराबी निरुत्साही, आलसी, भीरु, क्रोधी बन जाता है।

६. असत्य का परित्याग : मानव निर्माण मनुर्भव के पावन प्रसङ्ग में वेद का

उपदेश है-सत्य बोलो झूठ बोलना महापाप है ऋग्वेद का मन्त्र कहता है। सत्य पर ही पृथिवी टिकी हुई है। मनु महाराज कहते हैं कि सत्य धर्म है असत्य पाप है। कहा भी है कि सांच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप। **स्त्यम स्वर्गस्य सो जानम्** सत्य स्वर्ग की सीढ़ी है। अग्निहोत्री अंग स्पर्श से अपने तीन सूत्री कार्यक्रम सत्यं, यशः श्रीमद् में प्रथम सत्य की ही चाहना करते हैं। महर्षि पतञ्जलि ने अष्टांग योग प्रकरण में यम के अन्तर्गत सत्य को दूसरा स्थान दिया है।

७. वृत्ति बनो : अन्त में वेद के इस मन्त्र का उपदेश है **प्रतिज्ञा भंग मत करो** प्रतिज्ञा भंग करने वाले का विश्वास उठ जाता है। स्वामी दयानन्द एतद् विषयक अपने कथन में लिखते हैं कि जिसके साथ जैसी प्रतिज्ञा करो उसे

निभाओ स्व. डॉ. राजेश जी इस सम्बन्ध में सटीक बात किया करते थे उनका कहना है कि जो अपने जीवन में जो जैसी प्रतिज्ञा करता है उसे निभाना चाहिये। जो प्रतिज्ञा भंग करता है वह भंगी कहलाता है। हम प्रतिज्ञा करते हैं ब्रह्म मुहूर्त में उठने की, माता-पिता को नमन की, प्रातः जागरण मन्त्र से लेकर संध्या अग्निहोत्रादि को अपनी दिनचर्या में समाहित करने की। भयंकर विष चाय के नहीं पीने की, अपने जीवन आचरण और चाल-चरित्र में आस्तिकता और याज्ञिक आदर्शों की किन्तु शनैः-शनैः सब भूल जाते हैं तो ऐसे व्यक्ति भंगी होते हैं हमें प्रतिज्ञा पर अटल रहते हुए भंगी नहीं बनना चाहिए मनुर्भव का यही दिव्य सन्देश हमें आचरण और व्यवहार से स्वीकार करना चाहिये।

वेद और सृष्टि विज्ञान - आधुनिक विज्ञान वेत्ताओं के सन्दर्भ में

वेद परमात्मा का दिया हुआ अमर ज्ञान है। उसी की बनाई हुई यह सृष्टि है। जो कुछ हमें इस सृष्टि में दृष्टिगोचर होता है वह सब वेदसम्मत और विज्ञान पर आधारित है। सृष्टि के कारण ही सृष्टिकर्ता परमात्मा के अस्तित्व का पता चलता है। यह विज्ञानमयी सृष्टि उस परमात्मा का ज्वलन्त अभिज्ञान है। बड़े-बड़े वैज्ञानिक भी इसकी रचना को देखकर उसकी वैज्ञानिकता पर विमूग्ध हो जाते हैं। यह सृष्टि नास्तिकों को भी आस्तिकता से जोड़ देती है। परमाणु से लेकर बड़े-बड़े आकाशीय पिण्ड एक नियम का बोध कराते हैं। इसमें सुन्दरता, क्रमबद्धता, अवधि, निरन्तरता, त्रुटिरहितता, अद्भुत बुद्धिचातुर्य, असीमित ज्ञान प्रमाण्य एवं अनन्तता का दिग्दर्शन है। परमात्मा की सारी क्रीड़ा यह मनोहारी सृष्टि है। आईए, इस विज्ञानमयी सृष्टि के बारे में आधुनिक विज्ञानवेत्ताओं के सन्दर्भ में कुछ चिन्तन करें।

वेद के अनुसार सृष्टि का कर्ता व उसका उद्देश्य -

वेद के अनुसार इस सृष्टि का कर्ता एकमात्र परमेश्वर है जो निरन्तर अनन्तकाल से चली आ रही सृष्टि को बनाता है और एक निश्चित समयावधि में उसके कारणों में विलीन कर देता है। वेद भगवान कहते हैं -

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत।

दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः॥ ऋग्वेद १०/१९०/३

अर्थात् "परमात्मा ने पूर्व सर्ग के समान सूर्य और चन्द्रलोक को बनाया द्युलोक, पृथिवी, अन्तरिक्ष एवं अन्य सुखमय लोकों का निर्माण किया।" यहां 'पूर्व सर्ग' यह सिद्ध कर रहा है कि वर्तमान सृष्टि के पहले भी इसी प्रकार की सृष्टि थी और इसी प्रकार आगे भी यही क्रम चलेगा। द्युलोक, पृथिवी, अन्तरिक्ष एवं इनसे इतर लोक अनन्त सृष्टि के होने का संकेत देते हैं जिसको हम इस लेख में आधुनिक विज्ञानवेत्ताओं के विचारों द्वारा प्रस्तुत करेंगे। वेद भगवान कहते हैं-

इयं विसृष्टिर्यत आबभूव यदि वा दधे यदि वा न।

यो अस्याध्यक्षः परमेव्योमन्त्सो अङ्ग वेद यदि वा न वेद॥ ऋग्वेद १०/१२९/७

अर्थात् "यह विविध सृष्टि जहां से उत्पन्न होती है और जिसके द्वारा धारण की

- ओमप्रकाश आर्य -

आर्य समाज, रावतभाटा (राज.)

चलभाष - ९४६३२ १३७९७



जाती है तथा अन्त में जब यह नहीं रहती अर्थात् अपने कारण में लीन हो जाती है, इन सबका जो अध्यक्ष नियन्ता सर्वव्यापक परमात्मा है वह इसकी वास्तविकता को जानता है जब यह जगत् नहीं रहता अर्थात् अपने कारण में लीन होकर प्रलय अवस्था में रहता है" प्रलय और सर्ग इस सृष्टि के दो भाग हैं। प्रलय मूल कारण है। सृजन इसका दृश्य रूप है। सर्वव्यापक परमात्मा के अलावा इस पूर्ण सृष्टि विज्ञान को कोई नहीं जान सकता, क्योंकि आत्मा अल्पशक्ति वाला व अल्पज्ञ है और परमात्मा सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ है। मनुष्य न इसके प्रारम्भ को जान सकता है और न ओर-छोर को। इसी कारण इसे आदि-अन्त-रहित कहना ही अधिक उपयुक्त रहेगा। वेद भगवान कहते हैं-

विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्यात।

सं बाहुभ्यां धमति सं पतत्रैर्द्यावाभूमौ जनयन् देव एकः॥

किं सिद्धानं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावापृथिवी निष्पतक्षुः।

मनीषिणो मनसा पृच्छतैदु तद्यदध्यतिष्ठद् भुवनानि धारयन्॥

ऋग्वेद १०/८१/३-४

अर्थात् "वह अद्वितीय देव सर्वदृष्टा, प्रवक्ता, सबकी रक्षा करने वाला और सर्वत्र व्यापक है। वह अपनी ज्ञानक्रियाशक्ति के द्वारा उन अव्यक्त, गतिशील तत्वों से द्यु-भूमि आदि समस्त लोक-लोकान्तरों को उत्पन्न करता है।" परमात्मा अपने पूर्ण ज्ञान से, क्रियाशक्ति से अव्यक्त तत्वों से अर्थात् प्रकृति रूप उपादान साधन से सारी सृष्टि की रचना करता है। वही अपनी अनन्त शक्ति से इसको धारण कर रहा है। कहने का तात्पर्य यह है कि लोक-लोकान्तर दृश्य और अदृश्य रूप में अन्तरिक्ष में परमात्मा की क्रियाशक्ति को अभिव्यक्त कर रहे हैं। ये लोक-लोकान्तर कल्पना से परे हैं

क्योंकि इनके बारे में मन की गति भी नहीं पहुंच सकती। इतना ही नहीं अपितु यह पूर्णतः वैज्ञानिक सिद्धान्तों से परिपूर्ण है। एक परमाणु भी बिना नियम के नहीं है। सर्वत्र नियम दिखलाई पड़ता है। वेद भगवान कहते हैं

ब्रह्माणस्पतिरेता सं कर्मार इवाधमत् ।

देवानां पूर्वं युगेऽसतः सदजायत ॥ ऋग्वेद १०/७२/२

अर्थात् “सर्वोत्कृष्ट ब्रह्म ने इन समस्त लोकों का उसी प्रकार निर्माण किया जैसे कोई शिल्पी उपयुक्त साधनों से कार्य की रचना किया करता है।” परमात्मा सृष्टि का शिल्पकार है। उस महान् शिल्पकार की सृष्टिविद्या बड़ी अद्भुत है। एक से एक विचित्र रचनाएं उसमें भरी पड़ी है जिसको देखकर बड़े-बड़े वैज्ञानिक आश्चर्यचकित रह जाते हैं। अतएव सृष्टि का कर्ता केवल और केवल परमात्मा है। इसी बात को वेदान्त दर्शन कहता है—**जन्माद्यस्य यतः...** अर्थात् “जन्म, उत्पत्ति आदि इसकी जिससे। इस समस्त संसार की उत्पत्ति और ‘आदि’ पद से गृहीत स्थिति तथा प्रलय जिससे होता है वह ब्रह्म है।” उसने ही वैज्ञानिक बुद्धि से इस सृष्टि का निर्माण किया है।

इस सृष्टि का उद्देश्य है जीवात्माओं को भोग प्रदान करना और उनको कर्म का फल प्रदान करना। यदि यह सृष्टि ना हो तो जीवों को भोग कहां से प्राप्त होगा और जीव कर्मों का फल कहां प्राप्त कर सकेगा। यह सृष्टि जीवों की क्रीडास्थली है। यहां आकर जन्म और मृत्यु रूप खेल किया करते हैं। कर्मफल के रूप में सुख-दुःख भोगा करते हैं। सृष्टि के कारण ही जीवों का अभ्युदय होता है। इस सृष्टि की कला और वैज्ञानिकता देखकर मुक्त जीव ३६००० बार सृष्टि-प्रलय काल के बराबर मोक्ष का सुख भोगते हैं। यद्यपि वे इसमें लिप्त नहीं होते, किन्तु इसके विज्ञान को देखकर परम आनन्द प्राप्त करते हैं। परमात्मा ने सृष्टि की रचना करके जीवों के भोग के लिए सर्वसुखसाधनों को प्रदान किया है। यहां जन्म लेकर वे इसका भोग करते हैं। यदि सृष्टि न होती तो जीवों का कोई महत्व नहीं रहता। मनीषी इस सृष्टि रचना को उद्देश्यपूर्ण सिद्ध करते हैं क्योंकि सृष्टि का कोई भी पदार्थ उद्देश्य रहित नहीं है। अतः जीवों को भोग प्रदान करना इसका मुख्य उद्देश्य है और ज्ञानीजनों के लिए यह सृष्टि मोक्ष का द्वार खोलती है। वे इस सृष्टि में शरीर धारण करके मोक्ष प्राप्त करते हैं और परमानन्द भोगते हैं।

सृष्टि अनन्त है या इसका कहीं अन्त होगा - “विश्वतश्चक्षुरुत”
“विश्वतोमुखो” आदि वेद के पद यह सिद्ध कर रहे हैं कि सृष्टि के कण-कण में परमात्मा व्याप्त है। जब परमात्मा अनन्त है तब सृष्टि के अनन्त होने में क्या सन्देह। जरा आज के वैज्ञानिक विचारों का चिन्तन करें। “ज्ञान-विज्ञान” राजस्थान पत्रिका दिनांक १३-१२-२०१६ में प्रकाशित लेख “कब कहां पहुंचेंगे” प्रकाश की गति से यात्रा संभव हो जाए तो ऐसी अन्तरिक्ष की यात्रा - “अगर आप प्रकाश की गति के ९९.९ प्रतिशत यानी २९,९७,९२,४५८ मीटर प्रति सेकंड से अन्तरिक्ष की यात्रा करते हैं तो चन्द्रमा पर पहुंचने का औसत समय होगा १.२८ सेकंड। मंगल ग्रह तक पहुंचने में ४.३६ मिनट लगेंगे। शनि ग्रह तक पहुंचने में १.१८ घंटे लगेंगे। प्लूटो तक

पहुंचने में ५.३५ घंटे लगेंगे। प्रॉक्सिमा सेंचुरी (सूर्य का सबसे करीबी तारा) तक पहुंचने में ४.३ साल लगेंगे। वोल्फ १०६१ सी तक पहुंचने में १३.७८ साल लगेंगे। गैलेक्सी (मिल्की वे का केन्द्र) तक पहुंचने में ३०,००० साल लगेंगे। कॉमा क्लस्टर (१००० गैलेक्सीयों का समूह) तक पहुंचने में ३४० मिलीयन साल लगेंगे। आई सी ११०१ (सबसे बड़ी अज्ञात गैलेक्सी) तक पहुंचने में १.०३८ मिलीयन साल लग सकते हैं। देखे जा सकने वाले ब्रह्माण्ड का छोर तक पहुंचने में ४६.१ बिलियन साल लगेंगे।” यह हुई देखे जा सकने वाले ब्रह्माण्ड की बात। जो ब्रह्माण्ड अदृश्य है और जहां तक कोई भी दूरबीन या यंत्र काम नहीं कर सकता, वहां तो कल्पना भी नहीं कर सकते कि कितना प्रकाश वर्ष लग सकेगा। यह परिकल्पना के आधार पर यह सिद्ध हो रहा है कि सृष्टि अनन्त है। इसका कोई ओर-छोर नहीं है। जब परमात्मा अनन्त है तो उसकी सृष्टि भी अनन्त ही होगी। कल्पना से परे होगी।

सृष्टि की विचित्रता के बारे में आधुनिक वैज्ञानिकों के विचार-

परमात्मा के द्वारा बनाई हुई सृष्टि इतनी विचित्र है जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। विचित्रताओं भरी सृष्टि के कुछ उदाहरण आधुनिक वैज्ञानिकों की दृष्टि में, “पृथिवी से ३४० प्रकाश वर्ष दूर और बृहस्पति-ग्रह के द्रव्यमान से ४ गुना ज्यादा बजनी एक ग्रह है जो एचडी-१३१३९९ बी ग्रह काफी युवा है। इस ग्रह पर तीन बार सूर्योदय और सूर्यास्त होता है। इसकी आयु ४.५ अरब वर्ष है।” “धरती से ४०० लाख प्रकाशवर्ष दूर आकाशगंगाओं का एक बड़ा समूह है जिसका आकार अरबों सूर्य के बराबर है। इसका नाम ‘सरस्वती’ रखा गया है। यह करीब १० अरब वर्ष से अधिक पुराना है।” राजस्थान पत्रिका दिनांक २५-७-२०१७ में प्रकाशित समाचार के अनुसार हमारी आकाशगंगा से १००० गुना ज्यादा चमकीली आकाशगंगा है जिसमें सालाना १००० सौर द्रव्यमान के बराबर तारों का निर्माण हो रहा है।” राजस्थान पत्रिका २७-७-२०१७ में प्रकाशित समाचार के अनुसार मानव की तरह तारों का भी जीवन चक्र होता है। वे पैदा होते हैं, जवान होते हैं, बुजुर्ग होते हैं और फिर खत्म हो जाते हैं। खगोलविदों ने हमारी सौर प्रणाली के पड़ोस में तारों की गणना की कि वहां कितने अल्प वयस्क जवान और बूढ़े तारे हैं।” राजस्थान पत्रिका ३०-१२-२०१७ में प्रकाशित समाचार के अनुसार खगोल शास्त्रियों ने एक ऐसा ग्रह खोजा है जहां एक साथ तीन सूर्य उगते हैं और डूबते हैं यहां का १ साल पृथिवी के १ साल के बराबर होता है। इस ग्रह के कुछ हिस्सों में सालभर लगातार दिन ही रहता है। इस ग्रह को एक बार अपनी कक्षा का चक्कर लगाने में धरती के मुताबिक ५५० साल लगते हैं।” राजस्थान पत्रिका १९-१-२०१८ में प्रकाशित समाचार के अनुसार नासा ने एक तस्वीर जारी की है जिसमें करीब तीस लाख अरब सूर्य के समूह का गैलेक्सी दिखाई दे रही है। यह सबसे बड़ा, सबसे गर्म और चमकीला है। राजस्थान पत्रिका २५-०७-२०१७ के अनुसार अंतरिक्ष विज्ञानियों ने हमारी आकाशगंगा से १००० गुना ज्यादा चमकीली आकाशगंगाओं की खोज की है। इसमें सालाना १००० सौर द्रव्यमान के

बराबर तारों का निर्माण हो रहा है। राजस्थान पत्रिका १८-१-२०१८ के प्रकाशित समाचार के अनुसार टैबी स्टार ब्रह्माण्ड का सबसे रहस्यमयी तारा है और यह धूलकणों की वजह से असामान्य ढंग से मंद और उज्ज्वल होता है। के आई सी ८४६२८५२ या टैबी स्टार सूर्य की तुलना में लगभग ५०% बड़ा है और १००० डिग्री अधिक गर्म है। राजस्थान पत्रिका ६-७-२०१८ के अनुसार पीडीएस ७० नाम के सितारे की दूरी इस पृथिवी से ३७० प्रकाश वर्ष है। यह बृहस्पति से काफी बड़ा है। राजस्थान पत्रिका २७-४-२०१८ के अनुसार करीब १२०० करोड़ वर्ष की दूरी पर १४ गैलेक्सीयों का महासंगम हो रहा है। राजस्थान पत्रिका १६-३-२०१८ के अनुसार इन्टरनेशनल सेन्टर फॉर रेडियो एस्ट्रोनॉमी रिसर्च के खगोलविदों के मुताबिक गैलेक्सी भी परिक्रमा करती है। कोई गैलेक्सी लगभग एक अरब वर्ष में एक पूरा चक्कर लगाती है। राजस्थान पत्रिका १०-४-२०१८ के अनुसार २२ करोड़ प्रकाश वर्ष दूर स्थित इसरो ने आकाशगंगा एनजीसी ७२५२ की तस्वीर जारी की है। तस्वीरों में चमकीले तंतुओं के रूप में तारों और गैस के वलय नजर आते हैं। यह सब एक सर्पिल रचना को घेरे हुए हैं। यह तारा इतना बड़ा है कि इसकी रोशनी को पृथिवी तक पहुंचने में ९ अरब वर्ष लग गए। राजस्थान पत्रिका १५-३-२०१८ के अनुसार नासा के वैज्ञानिकों ने २४ करोड़ प्रकाश वर्ष दूर रेलिक आकाशगंगा एनसीजी १२७७ की खोज की है। इस गैलेक्सी के ब्लैकहोल का आकार अन्य से काफी बड़ा है।" उपर्युक्त उदाहरणों से यह सिद्ध हो रहा है कि

सृष्टि बड़ी ही विचित्र है। वैज्ञानिक और नियमों में बंधी हुई है। यह अनन्त परमात्मा की अनन्तता का प्रमाण है।

सृष्टि और हमारा जीवन कितना विज्ञान सम्मत - हम जिस आकाशगंगा के सौरमंडल में रहते हैं उन सबका जीवन और जगत् से अटूट सम्बन्ध है। जैसे- हमारे सौरमंडल में आठ ग्रह हैं। यदि किसी घटनावश कोई एक ग्रह नष्ट हो जाए तो उसका प्रभाव अन्य ग्रहों पर पड़ेगा। उन ग्रहों के प्रभावित होने से आकाशगंगा में परिवर्तन या प्रभाव पड़ सकता है। इस प्रकार सृष्टि और जीवन का क्रम एक दूसरे पर आश्रित है। इसका हमारे कर्म से कोई सम्बन्ध नहीं है। सूर्य, चन्द्र का जीवन पर प्रभाव भौतिक है। सब जीवन को चलाने में मदद कर रहे हैं। इसी कारण इन्हें देवता कहा गया है।

सृष्टि का सम्बन्ध मोक्ष प्राप्त जीवों के सन्दर्भ में- महर्षि दयानन्द सरस्वती ने मोक्ष के आनन्द का काल ३१ नील १० खरब ४० अरब वर्ष बताया है। इतने काल तक मुक्त जीव परमात्मा की बनाई वैज्ञानिक सृष्टि के विज्ञान को देखकर आनन्द मग्न रहता है। इतने काल तक वह अनन्त सृष्टि में मुक्त विचरण करता हुआ परमानन्द का भोग करता है। इस आधार पर विचार करें तो पता चलेगा कि मोक्ष प्राप्त जीवों के लिए सृष्टि का अपना महत्व है।

वेद और विज्ञान का समन्वय- वेद विज्ञान है और विज्ञान वेद है। वेद का एक-एक शब्द विज्ञान से परिपूर्ण है। जैसे सृष्टि-रचना रहस्यपूर्ण है उसी प्रकार वेद में विज्ञान के अथाह समुद्र हैं। वेदज्ञान पूर्णतः विज्ञान पर आधारित है। ●

यजुर्वेद एक सरल अध्ययन-वेद आविर्भाव

वेदों का आविर्भाव, उत्पत्ति तथा प्रकट होना भिन्न-भिन्न सन्दर्भ एवं व्याख्या युक्त पद हैं। हम यहां एक सरलतम उदाहरण देकर विषय प्रवेश करते हैं। जिस प्रकार किसी कक्ष में विद्युत बटन दबाते ही वहां समानान्तर स्थित वस्तुओं पर एक साथ प्रकाश पड़ता है, उसी प्रकार मानव सृष्टि के आदि में समान पुण्यात्मा चार महर्षियों के हृदयों में मानस पटल पर वेद मन्त्र राशि का प्रकाश पड़ा उसी से उन्होंने वेदों के, अपने स्वयं के तथा विश्व के इतर पदार्थों के सार्थक एवं आवश्यकतानुसार नामकरण किए। उन्होंने अपने वेद के अतिरिक्त शेष तीनों वेदों की मन्त्र राशि परस्पर आदान-प्रदान पूर्वक पढ़ी। इस प्रकार ये चतुर्वेदी हुए। उसी समय विधाता की इस सृष्टि में एक सूर्य सदृश प्रखर प्रज्ञ पुरुष ने उन चारों से चारों वेद पढ़कर ब्रह्मा नाम एवं पदवी प्राप्त की। वे कभी निर्वेश नहीं हुए। शिष्य पुत्रों की प्राप्ति होते रहने से आज पर्यन्त एक पावन परम्परा पल्लवित होती रही है तथा ईश्वरीय होने यह ज्ञान प्रलय पर्यन्त बना रहेगा। कालान्तर में सामर्थ्य या क्षमता के कुल क्षीण हो जाने से (एक) वेदी, द्विवेदी, त्रिवेदी, सच्चे ब्राह्मणों से यह सम्पूर्ण पृथिवी प्रतिनिधित्वपूर्ण हो गई। ब्रह्मा उवाच, विष्णु उवाच, शिव उवाच, व्यास/पाराशर/ कृष्ण/ अर्जुन उवाच के छद्म नाम पर जाली एवं जाल ग्रन्थ कर्ताओं किंवा मूल को भी निर्मल कर देने जैसी रचनाओं के प्रक्षेपकर्ता पंडितों एवं



- रमेशचन्द्र चौहान -

२६२/ए, पार्श्वनाथ नगर, इन्दौर

चलभाष :



ब्राह्मण नाम धारियों के इस देश में भी वैदिक पुण्यात्माओं ने चारों वेदों को आज हम तक यथावत पहुंचाया है। उन जीवन इदम मम कर्ता महामनाओं के प्रति, सर्वप्रथम विनम्र कृतज्ञता व्यक्त करता हूं। यह इसलिए भी कि वेद सच्चे अर्थ में तो उनके सनातन एवं वर्तमान सामाजिक स्वार्थों के विरुद्ध होते हुए भी उन्होंने निश्छलमना अबोध शिशुओं जैसे रहकर हमें उस ज्ञान से कृत-कृत्य तो किया। शेष कार्य तो वेदों से वेद पढ़कर भी सम्पन्न हो सकेगा। हम आशावादी हैं, प्रभु कृपा से ऐसा भी युग आएगा।

यजुर्वेद, विश्वोदय का एक दिव्य ग्रन्थ है, विश्व मांगल्य का अद्भुत विधान है। हम यथा सम्भव इस लेख में इसी से सन्दर्भ समुद्घृत करने का प्रयत्न करेंगे। चारों वेदों में ऋग्वेद के साथ ही यजुर्वेद ३१-७ में यजुर्वेद की उत्पत्ति/प्रादुर्भाव का वर्णन है-

तस्माद् यज्ञात् सर्वहुतः ऋच सामानि जज्ञिरे।

छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्माद् जायत ॥

इस मन्त्र का ऋषि नारायण तथा देवता सृष्टेश्वर है। इसका छन्द अनुष्टुप एवं स्वर गान्धार है। मानव सृष्टि में वेदों की प्राप्ति सम्बन्धित विभिन्न क्रियापद जज्ञिरे अजायत अपाकषण आदि का प्रयोग पुनरावृत्ति नहीं होकर आशय की पारस्परिक पूरकता तथा अर्थ की विशिष्टता के प्रकाशन हेतु है।

महर्षियों ने चारों वेदों की विधाओं को तीन विधाओं में विभक्त करके त्रयीविद्या अथवा वेदत्रयी अभिधान दिया है। त्रयी विद्याएं हैं - ज्ञान, कर्म तथा उपासना जो क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और चतुर्थ इन तीनों का समन्वित रूप अथर्ववेद। यह समन्वित रूप स्थिर सृष्टि नियमों का वेद होने से अत्याधिक अथवा प्रथम दृष्टया उपयोगी है। इसी कारण किसी यज्ञ-याग का ब्रह्मा सदैव अथर्ववेदज्ञ ही होता है। सर्वाधिक विद्याओं से युक्त होने से इसे मही भी कहा गया है। अथर्व १०-७-१४

यजुर्वेद की व्यापकता

ऋग्वेद तृण से लेकर परमेश्वर पर्यन्त पदार्थों के यथावत् वर्णन का काव्य है। इसे आगे बढ़ाकर उस ज्ञान को साधारण कर्म से लेकर श्रेष्ठतम कर्म सर्वोपयोगी कार्य की पूर्व तैयारी प्रारम्भ, विस्तार एवं परिसमापन पश्चात् तक के कार्यों का वर्णन यजुर्वेद में है। इस प्रकार ऋग्वेद जहां ज्ञानवेद है तो यजुर्वेद श्रेष्ठतम कर्म, यजन, आयोजन का वेद है। सम्पूर्ण वैश्विक जीवन को सफल बनाने के सूत्र, समस्त उत्कृष्ट नैतिक मूल्य तथा सार्वभौम स्वरूप में कर्म यज्ञ की सविस्तार व्याख्या यजुर्वेद की केंद्रीभूत उद्देश्यता है। निद्रा से जागने से लेकर शयन, चिरनिद्रा के पश्चात शरीर के भस्मीभूत होकर पंचभूतों में विलीन होना तथा पुनः कर्मफल के अनुसार आत्मा की पंचभूतों में यात्रा कर गर्भ में पहुंचना, व्यष्टि से लेकर समष्टि पर्यन्त कर्तव्य, स्वगृह से लेकर समस्त पार्थिव-भौमिक, देशों-स्थानों एवं लोक लोकान्तर तक पहुंच बनाकर विधाता की सृष्टि को सफल बनाने तक का मार्गदर्शन इस वेद में है। साथ ही शरीर एवं आत्मा दोनों के चरमोत्कर्ष का स्वरूप एवं उसे प्राप्ति के उपाय भी इसके विभिन्न अध्यायों में वर्णित हैं।

यजुर्वेद-मूल स्वरूप एवं संरचना

आजकल आदित्य सम्प्रदाय का शुक्ल यजुर्वेद, उत्तर भारत में तथा ब्राह्म सम्प्रदाय का कृष्ण यजुर्वेद दक्षिण भारत में प्रचलित है। जब वैदिक वाङ्मय का शाखाकाल प्रवर्तित हुआ तो मूल वेदों (वैदिक संहिताओं) को भी शाखा नामधेयता प्रदान कर दी गई। फलतः ऋग्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद की भांति मूल यजुर्वेद संहिता को भी- माध्यन्दिन या वाजसनेय शाखा नाम दे दिया गया। अब हमें शाखा भ्रम के समूल नाश के लिए इसके साथ जुड़ा शाखा शब्द भूलाना होगा और इसे यजुर्वेद संहिता या यजुर्वेद मात्र कहना होगा। रही बात कृष्ण यजुर्वेद की तो यह तो दक्षिण भारत में स्वरुचि अनुसार फली फूली शाखा मात्र है और महत्व बढ़ाने हेतु इसके नाम के आगे संहिता शब्द जोड़ इसकी शाखाएं (यथार्थ में यजुर्वेद की प्रशाखा-उपशाखा) लिखी गई। इस प्रकार कृष्ण यजुर्वेद, यजुर्वेद संहिता की एक शाखा मात्र है, जिसमें शाखा होने के लक्षण भी विद्यमान हैं। ऋषि राम रेग्मी अथर्ववेदाचार्य ने कृष्ण यजुर्वेद के कृष्णत्व का कारण इस प्रकार लिखा है संहिता एवं ब्राह्मण की संकीर्णता, मन्त्र

विनियोग की विविधता संहितापाठ की विविधता, मन्त्रों की अपूर्णता तथा कुछ ग्रन्थों की अस्त व्यस्तता, (कल्याण वेद कथा पृष्ठ १६६ महापण्डित रघुनन्दन शर्मा ने अपनी महनीय कृति वैदिक सम्पत्ति के सम्प्रदाय प्रवर्तन और आर्य साहित्य विध्वंस अध्याय में इस प्रकरण पर सविस्तार प्रकाश डालते हुए महीधर तथा विद्यारण्य स्वामी को इस प्रकार उद्धृत किया है-

१. बुद्धिमालिन्य हेतुत्वात् तदयजुः कृष्ण मीर्यते - विद्यारण्य स्वामी

२. तानि यजुषि बुद्धि मालिन्यात् कृष्णानि - महीधर

बुद्धि मालिन्य भी ऐसा की इसकी शाखा, उपनिषदों आदि मूल यजुर्वेद के आचार शास्त्र के विरुद्ध यज्ञ हिंसा, मांसाहार, मानव वध एवं पंच मकारादि आसुरी क्रियाओं का विधान किया गया है। अतः अब हम इस कृष्णत्व एवं तैत्तिरीयवाद को त्यागकर मूल यजुर्वेद की शरण ग्रहण करते हैं। वेदों का मूल स्वरूप :- हम यजुर्वेद ही नहीं किसी भी वेद संहिता को शाखा कहना पसन्द नहीं करते। जो लोग यजुर्वेद को वाजसनेय या माध्यन्दिन शाखा कहते हैं, वे कदाचित् इसलिए कि यह वेद वाजसनेय या यज्ञवल्क्य द्वारा मध्यदिन में अध्ययन किया गया था। हमारा निवेदन है कि ये ऋषि सृष्टि के आदि में नहीं वरन् बाद में हुए जबकि यजुर्वेद आदि को मानव सृष्टि के आदि में प्राप्त माना जाता है और स्वयं वेदों में भी वैसा ही लिखा है। अब यह सहज प्रश्न होगा कि क्या मूल वेद किंवा यजुर्वेद अदृश्य अथवा अप्रकाशित है। जी हां, इसका सरल उत्तर तो यही है कि मात्र विशुद्ध या मूल वेद अदृश्य तो नहीं परन्तु पुस्तक रूप में पढ़ने में कहीं नहीं आए, अप्रकाशित हैं।

सच तो यह है कि आदिकाल में ना तो हमारे धर्म ग्रन्थ का कोई शीर्षक था और न ही हमारे धर्म का ये वेदों के जो नाम करण हैं वे हमारे महामना ऋषियों ने इन्हें साक्षात्कार विषय वस्तु के आधार पर रखे हैं। हमारे धर्म का नाम वैदिक धर्म किंवा सनातन धर्म भी उन्हीं की देन है अब, वेद किंवा यजुर्वेदादि का स्वरूप सर्वथा सुस्पष्ट है मात्र मूल वेद मन्त्र, वे भी बिना ऋषि, देवता छन्द स्वर तथा मण्डल, सूक्त, अष्टक, वर्ग, अध्याय, कण्डिका, काण्ड, अर्चिक आदि विभाजन के वेद हैं। मन्त्रों का क्रमांकन भी वेद नहीं है यहां तक की वेदों, चारों वेदों के नाम तक वेद का भाग नहीं है। इसी कारण प्रत्येक वेद के एकाधिक नाम हैं विशेषकर अथर्ववेद के, इसका सीधा सा लाभ तो यह है कि वेदार्थ में आन्तरिक दीवार अवरोध समाप्त हुआ और हम श्रद्धापूर्ण तर्क पूर्वक वेदार्थ अवगाहन कर सकते हैं। हम "अग्निमीळे से उपयाता पिवध्ये" तक निर्वाध ज्ञान यात्रा कर सकते हैं। संक्षेप में माध्यन्दिन शाखा के ऋषि, देवता, छन्द, स्वर तथा वर्गीकरण सूचक शब्दावली छोड़कर मन्त्र मात्र यजुर्वेद का मूल स्वरूप है। वेदों के अपने इस रूप के कारण कुछ कठिनाइयां भी हुई। अतः महामना, मेधावी महर्षियों ने स्वाध्यायियों की सुविधा हेतु उपर्युक्त वेदनाम शीर्षक से लेकर मन्त्र क्रमांक एवं वर्गीकरण तक प्रावधान किए जो कि चारों वेदों में भिन्न-भिन्न ही नहीं वरन् काले-काले परिवर्तनशील भी रहे हैं। आज के संगणक युग को यह भी सम्भव है कि वेद शीर्षक से एक ही संहिता बन जाए उस ज्ञान का ऋषि, देवता आदि प्राचीन तथा नए युग की आवश्यकतानुसार नए शीर्षकों में विभाजन हो जाए। हां मूल

स्वरूप अवश्य बनाए रखा जाए क्योंकि अनेक मन्त्रों में कई विषय भी हैं
यजुर्वेद, वाजसनेय या मध्यन्दिन शाखा के रूप में

उपर्युक्त विवेचना के प्रकाश में आज हमारे समक्ष प्रकाशित एवं उपलब्ध यजुर्वेद, वाजसनेय माध्यन्दिन शाखा के रूप में है। मूल स्वरूप के बारे में पिष्टपेषण की आवश्यकता नहीं है। इस संहिता में ४० अध्याय हैं। प्राचीन काल में इसके ३०३ अनुवाकों में १९७५ कणिकाएं होती थी। आजकल ४० अध्याय १९७५ मन्त्रों में विभक्त है :-

इस प्रकार यजुर्वेद में कुल १९७५ वेद मन्त्र हैं जो छन्दों में हैं, पहले कंडिकाएं कहे जाते थे। मूल यजुर्वेद वाजसनेय शाखा में अक्षुण्ण उपलब्ध होते हुए भी कोई यह न समझे कि यह सर्वप्रथम शाखाकार या याज्ञवल्क्य को साक्षात् हुआ। यथार्थ में चारों वेद मानव सृष्टि के आदि में सर्वाधिक पवित्रात्मा चार विषयों के मनो में प्रकट हुए, यह उन्हीं में से एक है यथा

१. अग्ने ऋग्वेदो वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात् सामवेदः ।

शतपथ ११-५-८-३, तुलनीय गोपथ १-६

२. अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयंब्रह्म सनातनम् ।

दुदोह यज्ञ सिद्धयर्थं मृग्यजुः समलक्षणम् ॥ मनु १-२३

३. तेविदन् प्रथमा ब्रह्म किल्बिषेकपारः सलिलो मातरिश्वा

वीळुहरास्तप उग्रो मयोभूरापो देवीः प्रथमजा ऋतेन ॥ ऋग्वेद १०-१०९-१

(यही मन्त्र अथर्व. ५-१७-१ में भी है)

स्वामी ब्रह्म मुनि परिव्राजक विद्या मार्तण्ड ने ऋग्वेद भाष्य में इस मन्त्र में आए पद अकूपारः, सलिल, मातरिश्वा तथा वीळुहरा का अर्थ क्रमशः आदित्य, अंगिरा, वायु तथा अग्नि किया है जो कि क्रमशः सामवेद, अथर्ववेद, यजुर्वेद तथा ऋग्वेद के प्रकाशक प्रथम परमर्षि हैं। स्वामी जी का यह अर्थ ऋषि ब्रह्मजाया एवं देवता विश्वेदेवा के अनुकूल एवं मौलिक है। अकूपार आदि चारों ऋषियों के नाम नहीं, वरन उनके गुण, धर्म, पात्रता या विशेषताएं हैं।

यजुर्वेद के ऋषि, देवता, छन्द, स्वर तथा वेदार्थ

यजुर्वेद के ऋषि, देवता, छन्द, तथा स्वर विविध रोचक एवं मौलिक हैं। उदाहरणार्थ प्रथम मन्त्र के ऋषि परमेष्ठी प्रजापति एवं देवता सविता है, जबकि इषे से भाग तक छन्द स्वराडबृहति एवं स्वर मध्यम तथा इसके बाद मन्त्र समाप्ति तक छन्द ब्राह्म्य उष्णिक् एवं स्वर ऋषभ है। मन्त्र के मध्य कहीं पूर्ण विराम नहीं है।

किसी काल में यजुर्वेद का वर्गीकरण ४० अध्याय ३०३ अनुवाक एवं १९७५ कण्डिकाओं में था। कण्डिका का शब्दार्थ है छोटे से छोटा अनुच्छेद और उसमें भी छन्द माने जाते थे। आजकल कण्डिकाएं मन्त्र कहलाती हैं। यजुर्वेद में छन्द सौष्ठव भी दर्शनीय है। इसमें भी विविधता व्याप्त है। उदाहरणार्थ-तीसवें अध्याय के २२ मन्त्रों में १५ छन्द हैं। इसके अतिरिक्त इस वेद के सस्वर पाठ के साथ ही हस्त चालन पद्धति भी जुड़ी है। वेदार्थ में इस महती सम्पदा (ऋषि देवता छन्द स्वर) का भी उपयोग होता है। हमारे पास हस्त चलन के चित्र उपलब्ध यजुर्वेद के सभी मन्त्र छन्दमय हैं। पता नहीं क्यों

लोग इसे गद्य कहते हैं।

वेदार्थ : किसी भी ग्रन्थ को समझने के लिए उसकी भाषा का ज्ञान सर्वोपरि आवश्यकता है। वेद के सम्बन्ध में इसे प्रचलित छः वेदाङ्गों में से शिक्षा, व्याकरण, निरुक्त एवं छन्द से प्राप्त करते हैं। शेष कल्प एवं ज्योतिष तो आयुर्वेद, धनुर्वेद जैसे विशिष्ट विषय हैं। इन्हें वेदाङ्ग कहकर इनकी महिमा बढ़ाना अच्छी बात है। वेदाङ्ग का आशय वेद मित्र समझने तक ही ठीक है। अन्यथा वास्तविक वेदाङ्ग तो देवता (विषय) अनुसार या शिक्षा व्याकरण निरुक्त छन्द के अनुसार वेदों के वर्गीकरण से प्राप्त संकलन वेदाङ्ग हैं। कुमारिल भट्ट ने तन्त्र वार्तिक १-३-२ में यही तो कहा है। पं. वीरसेन वेदश्री ने गुरुकुल कांगड़ी सम्मेलन में दिनांक १५-४-१९७७ को पठित शोधपत्र में वेदाङ्गों का वर्गीकरण इस प्रकार किया है -

१. ऋषि, २. देवता, ३. छन्द, ४. स्वर, ५. विनियोग ६. फलज्ञान।

हमारे विचार से वेदाङ्गों के इन तीनों प्रकार के वर्गीकरण पर कार्य करने के दिन आ गए हैं। कारण स्पष्ट है कि पूर्वोक्त शब्द शास्त्र वेदाङ्गों की भी अपनी सीमाएं हैं, क्योंकि वे वेदों के लाखों वर्ष बाद बने हैं। महर्षि यास्क-पाणिन-पिंगल की भाषा संस्कृत थी, वैदिक भाषा नहीं। इसे छन्दसि बहुलम् रचकर स्वीकार किया गया है। इस समग्र सामग्री को वेदार्थ हेतु उपयोग के अतिरिक्त भी एक उपाय और है। वह है बार-बार गम्भीरता पूर्वक वेदों से ही वेदार्थ अर्थात् वेद के शब्दों का वेद के शब्दों से ही निर्वचन। इस कार्य में भी महती तर्कशक्ति, भाषा ज्ञान तथा उससे भी बढ़कर सर्वथा सिद्ध पूर्ण निष्ठा एवं सर्वोपरि श्रद्धा की आवश्यकता होगी। कई जीवन लग जाएंगे, कई विद्वान अमर हो जाएंगे तब जाकर वेदों से वेदार्थ का यह महत् कार्य सम्भव है। यह असम्भव नहीं है। पुरुषार्थ से परिवर्तन होता है। ९२ वर्ष पूर्व वैक्रमाब्द १९८१ में वैदिक यन्त्रालय से बिना ऋषि देवता आदि की अथर्व संहिता छपी थी, परन्तु अब हम उत्कृष्टता की सीमा छू चुके हैं। आर्य आत्माएं अविनाशी, अविकारी हैं उनका तो ईश्वर में भी विलीनीकरण नहीं होता। वे तो वेद एवं विश्व कल्याणार्थ मध्य मोक्ष से भी विश्व के परावर्तन कर सकती है। आज आवश्यकता तो ऐसे अभ्यास की है कि विगत जन्मों के वेद संस्कारों को आकर्षित आहूत करके अगले जन्मों तक वेद कार्य की आयोजना की जाए। सच मानिए ये अनुभूतियां निश्चित होती हैं और हमारे इह जीवन के कार्य को सुकर, सुगम एवं सरल करने में सहयोगी होती हैं।

विश्व की वेदार्थ वेदना

वेद विश्व ग्रन्थ है, विश्व धरोहर है। आज वेद का नवीन निर्वचन यही है कि वेद वह है जो विश्व वेदना उत्पन्न कर दे। मेरी यही तो वैदिक वेदना है कि वेदों के सम्पूर्ण विश्व के हितेषी होने पर भी एक भी गुरुकुल या विद्यालय ऐसा उपलब्ध नहीं है, जहां अग्निमीळे (ऋ. १-१-१) से लेकर "उपयाता पिवध्यौ (अथर्व. २०-१४३-९) तक पूर्वोक्त वेद मित्रों के उद्धरण पूर्वक प्रतिपद पठन-पाठन की व्यवस्था हो। कोई तो अपने अस्तित्व के लिए ही संघर्षरत है। चारों वेदों का तो छोड़ो एक भी वेद का पूर्वोक्त मानदण्ड के अनुसार हिन्दी में भाष्य उपलब्ध नहीं है। म. म. युधिष्ठिर मीमांसक

ने ऋग्वेद के लिए ऐसा सीमित प्रयत्न किया था, जो अपूर्ण रहा।

आज उपलब्ध अधिकांश वेद भाष्यों में प्रमाणों का उल्लेख नहीं है। कोई-कोई तो षडन्धा कथा को भी पीछे छोड़ चुके हैं। सायण स्वयं अपनी प्रतिज्ञाओं पर भी स्थिर नहीं रहे। विदेशियों की तो बात ही क्या? आज भी निर्मल निश्चल मनो को 'को वेदानुद्धरिष्यति' पुकार पीड़ा पहुंचा रही है। ऋषि दयानन्द ने सम्पूर्ण यजुर्वेद तथा ऋग्वेद मण्डल ७ सूक्त ६२ मन्त्र २ तक भाष्य करके इन शून्य को पाटने का प्रयत्न किया परन्तु यह उच्च कोटि की सरल संस्कृत में है। (हिन्दी भाग ऋषिकृत नहीं है यह अनेक प्रमाणों के साथ ही दोनों भाषाओं (संस्कृत एवं हिन्दी) के भाष्यों के तुलनात्मक अध्ययन से भी सिद्ध है। इतना ही नहीं संस्कृत भाग का प्रस्तुतीकरण भी सुगम्य नहीं है। यदि छपाई के समय प्रतिपद अनुच्छेद होते तो कितना अच्छा होता। तथापि जो आनन्द संस्कृत भाग पढ़ने में है वह हिन्दी भाग में कहाँ? वह तो नीरस है। यजुर्वेद अ.१ मन्त्र ५ से एक पद उदाहरणार्थ प्रस्तुत है :-

अनृतात (संस्कृत में) :- न विद्यते ऋतं यथार्थमाचरणं यस्मिन् तस्मिन् मिथ्याभाषणान् मिथ्याकरणान् मिथ्या मानात् पृथग्भूत्वा।

अनृतात (हिन्दी में) :- जो झूठ से अलग (यह तो भाष्य से पलायन है।) ऋषिकृत भाष्य भाग पढ़ने हेतु निवेदन है। कुछ काल पश्चात् यह हिन्दी से भी अधिक सरल एवं तथ्य पूर्ण लगेगा, यह अनुभूत है। उनके ४३ ग्रन्थों में से सर्वाधिक महनीय ३० ग्रन्थ संस्कृत में है, अतः हमें उनकी भाषा सीखनी ही होगी तभी उनकी अन्तरात्मा तक पहुंचेंगे। इसी प्रकार वेद पढ़ते रहने से ही वैदिक भाषा भी सीख सकेंगे। ऋषि ने स्वयं भी अपनी संस्कृत भाषा में वैदिक प्रयोग किए हैं। परमात्मा कृपा करें कि कोई ऐसा भाष्य भी तैयार हो जिसमें समस्त प्रमाण-सन्दर्भ वेदों से ही हो और उसकी भाषा भी वैदिक हो। परमात्मा के कोई प्रिय पुत्र-पुत्री किसी काल में ऐसी प्रस्तुति भी देंगे। हम प्रतीक्षा करते हैं। इसमें अमर आयों के इतिहास के उदाहरण, संकेत स्वरूप भी होंगे।

यजुर्वेद की उदात्तता

वेद वैचारिक उदात्तता का अगाध सागर है- और हमारे पात्र एक छोटी सी गागर है। हम यहां चंचु प्रवेश मात्र प्रस्तुत करते हुए लेख का उपसंहार करते हैं। यजुर्वेद पर पृथक् कृति में हमने इसके साहित्यिक मूल्यांकन सहित अनेक पक्ष प्रस्तुत किए हैं।

१. वेदाधिकार :- विश्व कल्याणी वेदवाणी चारों वर्ण इष्ट मित्र तथा सर्वजनों के लिए कही गई है। यजु. २६-२ से मंत्रांश प्रस्तुत है :-

यथेमां वाचं कल्याणी मावदानि जनेभ्यः।

ब्रह्म राजन्यभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय।

हे मनुष्यों! जैसे मैंने यह कल्याणी वाणी सब मनुष्यों के लिए कही है। वेदाधिकार जैसा ब्राह्मण वर्ण के लिए है, वैसा ही क्षत्रिय, आर्य=वैश्य, शूद्र, पुत्र, भृत्य और अतिशूद्र के लिए भी बराबर है। (इसमें स्त्री पुरुष, आबाल वृद्ध देशी-विदेशी सभी सम्मिलित हैं, मात्र सद्भाव होना चाहिए।)

२. वर्णाश्रम तथा कर्मवाद :- यजुर्वेद श्रेष्ठतम कर्म यज्ञ से प्रारम्भ होकर

श्रेष्ठतम फल ब्राह्मण साक्षात्कार पर समाप्त होता है। प्रत्येक मनुष्य को कर्म करते हुए सौ वर्ष किंवा पूर्णायु जीने की आज्ञा है (यजु. ४०-२)। अध्याय ३० में सैकड़ों कार्यों का उल्लेख करते हुए यजुर्वेद में उन सब को प्रमुख प्रभाग वर्णों तथा आश्रम (आ+श्रम=चतुर्दिक श्रम) व्यवस्था में बांधा गया है। कर्म एवं फल के सभी सिद्धान्त यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय में पठनीय है।

३. आस्तिकवाद :- यों तो सम्पूर्ण वेद ही आस्तिकता से ओत-प्रोत है तथापि यजुर्वेद के चालिसवें अध्याय (स्वल्प अन्तर के साथ ईशोपनिषत्) का विशेष महत्व है। इसमें ईश्वर के स्वरूप, उसकी सृष्टि तथा कर्तव्य कर्म का स्पष्ट उल्लेख है। इसके प्रथम मन्त्र में ही सम्पूर्ण सृष्टि में ईश्वर की व्यापकता तथा अन्तिम मन्त्र में आकाश उपमान के साथ उसके मुख्य नाम ओ३म् बताया गया है, यथा

१. ईशावास्यमिदं सर्वम्। यजु. ४०-१

२. ओ३म् खं ब्रह्म। यजु. ४०-१७

४. उदात्त राष्ट्रवाद :- यजुर्वेद राष्ट्रीय वेद है। इसके अध्याय १० में ४० बार 'राष्ट्र' शब्द आया है। आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो यजु. २२-२२ को वैदिक राष्ट्रगीत कहा जाता है। वैदिक राष्ट्र सर्वभौम चक्रवर्ती साम्राज्य है, जिसमें संकीर्ण राष्ट्रवाद को स्थान नहीं है, किन्तु इसमें भूमि अर्जन, स्थिरीकरण, रक्षा हेतु सैन्य विज्ञान एवं निरन्तर सर्वतोमुखी विकास का प्रावधान है। वैदिक राष्ट्र स्वावलम्बी, स्वाधीन तथा **माव स्तेन ईशत** - यजु. १-१ होता है।

५. प्रथमा संस्कृति :- संस्कृति से किसी राष्ट्र की रचना धार्मिक तथा स्वास्थ्य परम्पराएं ज्ञात होती हैं। यजुर्वेद में जो कुछ लिखा है वह सब वैदिक राष्ट्र में घटित हुआ है। यजुर्वेद का विशेष महत्व इसलिए भी है कि इसमें अ. ७-१४ में उल्लेख है कि सृष्टि में जब भी प्रथम संस्कृति सृजी जाएगी, यह वैदिक संस्कृति ही होगी। वर्तमान सृष्टि में वैदिक आर्य अथवा भारतीय संस्कृति विश्व की प्रथम संस्कृति है। इसकी पुष्टि यजुर्वेद की शाखो पशाखा एवं इतर वैदिक वाङ्मय में सरलता पूर्वक सम्भव है।

६. शिक्षा :- पूर्वोक्त समस्त कर्मों के समुचित सम्पादन हेतु शिक्षण, प्रशिक्षण, संस्कार, सदाचार नय-नीति आदि की आवश्यकता होती है, जो यजुर्वेद में यथा स्थान वर्णित है तथा वे वर्णाश्रम व्यवस्था के अंग भी हैं।

७. बुद्धिवादी श्रद्धा :- यजुर्वेद में बुद्धि-धी एवं मेधा (आज की भाषा में बैंक एवं जमा शेष) दोनों रूपों में ईश्वर से प्रार्थित हैं। यजु. ३२-१४-१५ में विविध गुणान्वित ईश्वर से मेधा मांगी गई तथा विश्व की सर्वश्रेष्ठ स्तुति प्रार्थना एवं उपासना माना जाने वाला गायत्री मन्त्र पूर्वतः विद्यमान बुद्धि प्रज्ञा को शतपथ पर प्रेरित करने का सन्देश देता है।

८. विश्व मानवता :- यजु. ३-३३ में कहा गया है - **ते हि पुत्रसो अदितेः प्र जीवसे मर्त्याय।** जो मनुष्य के लिए जीते हैं वे ही ईश्वर पुत्र हैं। यजु. ३२-८ में कहा गया है कि जब विद्वान् ईश्वर के हृदय गुफा में देखता है तो यह विश्व जीव पंछियों का नीड बन जाता है। **तस्मात् श्रृण्वन्तु विश्व अमृतस्य पुत्रा** = हे विश्व के अमृतपुत्रों सुनो (यजु. ११-५) **मित्रस्याऽहंचक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।** (मित्र की दृष्टि से सारे प्राणियों को देखूँ। - यजु. २६-१८ ●

नरेन्द्र मोदी जी अब जागो

नरेन्द्र मोदी जी अब जागो, वैदिक पथ अपनाओ तुम।

न्यू इण्डिया की बातें छोड़ो, आर्यावर्त बचाओ तुम॥

श्री राम की जय के नारे, जनता से लगवाते हो।

राम राज हम लाएंगे, नित भारी शोर मचाते हो॥

भारत जग का गुरु बनेगा, तुम विश्वास दिलाते हो।

बात राम की नहीं मानते, गलत काम कर जाते हो॥

श्री राम मन्दिर बनवाओ, अपना वचन निभाओ तुम।

न्यू इण्डिया की बातें छोड़ो, आर्यावर्त बचाओ तुम॥

दुष्ट विधर्मी, देशद्रोही, भारी मौज उड़ाते हैं।

ईशा और मौहम्मद के जो, गीत रात-दिन गाते हैं॥

बाईबिल और कुरान को अपना पावन ग्रंथ बताते हैं।

वेद, शास्त्र, रामायण, गीता को झूठा ठहराते हैं॥

देश तोड़ना चाह रहे हैं, समझो, ना वक्त गंवाओ तुम।

न्यू इण्डिया की बातें छोड़ो, आर्यावर्त बचाओ तुम॥

काशमीर में आतंकवादी, नित उत्पात मचाते हैं।

खाते-पीते हैं भारत का, गीत अरब के गाते हैं॥

पाकिस्तान के झंडे पापी, भारत में फहराते हैं।

प्यारे वीर सैनिकों पर, पापी पत्थर वर्षाते हैं॥

संविधान से तीन सौ सत्तर, धारा शीघ्र हटाओ तुम।

न्यू इण्डिया की बातें छोड़ो, आर्यावर्त बचाओ तुम॥

समलैंगिकता का गन्दा कानून, मिटाओ मोदी जी।

युवकों और युवतियों को, सिया-राम बनाओ मोदी जी॥

सदाचार, ब्रह्मचर्य का, तुम पाठ पढ़ाओ मोदी जी।

अपने प्यारे भारत को, जग में चमकाओ मोदी जी॥

चंद्रगुप्त विक्रम बन जाओ, स्वर्ग धरा पर लाओ तुम।

न्यू इण्डिया की बातें छोड़ो, आर्यावर्त बचाओ तुम॥

जगतगुरु ऋषि-दयानन्द की शिक्षाओं को मानो तुम।

जन हितकारी, युगनायक को, ठीक तरह अब जानो तुम॥

ईश्वर भक्त, वेद उद्धारक, योगी को पहचानो तुम।

श्री कृष्ण, अर्जुन बन जाओ, गलत ठान मत ठानो तुम॥

“नन्दलाल” निर्भय दुनिया में, नाम अमर कर जाओ तुम।

न्यू इण्डिया की बातें छोड़ो, आर्यावर्त बचाओ तुम॥

भारद्वाज कुल गौरव

- पं. नन्दलाल निर्भय सिद्धान्ताचार्य -

आर्य सदन, बहीन, पलवल (हरियाणा)

चलभाष : ९८१३८ ४५७७४



श्रुति दुहिता

परलोक लोक के सुख लाई।

प्रभु की श्रुति दुहिता मुस्काई॥

कौन बड़ा है प्रभु से त्वष्टा।

श्रेय सुगम पथ शिल्पी सृष्टा॥

सत्यम् शिवम् सुन्दरम् दुहिता,

प्रिय वेद वाणीयां उत्कृष्टा।

नहीं न्यूनता ना अधिकाई।

प्रभु की श्रुति दुहिता मुस्काई॥१॥

शील संयमी सुत की जननी।

सूर्य तुल्य नरवर की वरनी।

संकल्प जगा कर छिप जाये,

कर्मण्य वाणीयाँ आचरनी।

हो नष्ट तिमिर की परछाई।

प्रभु की श्रुति दुहिता मुस्कान॥२॥

श्रुतिबाला का शुभ्र उजाला।

पारंगत अपार गति वाला।

श्रुति-सूर्य तुल्य सुगम दम्पती,

करते सृजन मोद की माला।

धन्य धन्य हो यही सगाई।

प्रभु की श्रुति दुहिता मुस्काई॥३॥

स्त्रोत - त्वष्टा दुहित्रे वहतुं कृणोति तेनेदं विश्वं भुवनं समेति।

यमस्य माता पर्यह्यमाना महोजाया विवस्वतो ननाश॥

अथर्व १८।१।५३



गीत गायक देवातिथि

देवनारायण भारद्वाज

वरेण्यम् अवन्तिका

रामघाट मार्ग

अलीगढ़ (उ.प्र.)

दूरभाष : ५७१-२७४२०६१

वेद महिमा

शरण जो वेद की आए तो बेड़ा पार हो जाए

हरेक उजड़ा हुआ जीवन पुनः गुलजार हो जाए

मिले उद्देश्य जीवन का, शांति-सुख, चैन तन-मन का

जले सद्ज्ञान की ज्योति दूर अंधकार हो जाए, शरण.....

मिटे दुर्भावना मन से, द्वेष मानव से मानव का

सभी में प्रेम अमृत का मधुर संचार हो जाए, शरण.....

खत्म हो जाए सीमाएं सभी देश और दुनियां की

सकल भूगोल के प्राणी एक परिवार हो जाए, शरण.....

मीटे त्रय ताप की पीड़ा सभी हों स्वस्थ दीर्घायु

भरा दुःखों से ये सारा संसार स्वर्ग हो जाए, शरण.....

मिलन हो जाए उस प्रभु से और आनंद मुक्ती का

डूबती कश्ती यह जीवन की, भव से पार हो जाए, शरण.....



नन्दलाल आर्य

२१, सगीतरा गली,

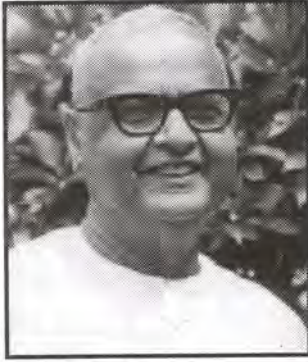
खाचरौद,

जनपद : उज्जैन

चलभाष -

९२२९४५८८८२

मूल लेखक



स्मृति शेष
शान्तिस्वरूप जी गुप्त

अथर्व का प्रकट नाम नहीं लिया। उन्होंने 'शौनकादिभ्यश्छन्दसि' (४-३-१०६) सूत्र में अथर्ववेद का उल्लेख किया है। अथर्ववेद पर कौशिक सूत्र का भी उन्हें ज्ञान था- 'काश्यपकौशिकाभ्या मृषिन्यां णिनिः' (४-३-१०३), साथ ही अथर्ववेद का भी उन्हें ज्ञान था 'आयर्विकाणां धर्म आग्रायो आथर्वणः।' वेद के भी निम्नांकित मन्त्र से यही सिद्ध होता है-

तस्माद् यज्ञात् सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ।

छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद् यजुः तस्माद् अजायत ॥ यजुर्वेद ३१-७

यस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतद् यद्

ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः। बृह. उ. २/४/१०

तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः शिक्षा कल्पो.

-मुण्डकोपनिषद् १/५

उपयुक्त उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है कि 'त्रयी' शब्द से जो तीन ही वेदों को ईश्वरकृत स्वीकार करते हैं, वे अन्धकार में हैं।

अथर्ववेद को वेद न मानने वाले लोग यह दूसरी युक्ति देते हैं कि उसमें जादू टोना, झाड़ू-फूंक, वशीकरण, उच्चाटन, मूठ मारना, अभिचार, कृत्या आदि कौशिक सूत्रानुसार अनेक ऊट-पटांग विषयों का वर्णन है। किन्तु इसके विपरीत अथर्ववेद के बीस काण्डों में विभक्त ४९७७ मन्त्रों में जीवन में पग-पग पर व्यवहार में आने वाले आयुर्वेद, वनस्पति-शास्त्र, गार्हस्थ्यशास्त्र, कामशास्त्र, मनोविज्ञान, राजनीति, युद्धनीति, शासन-व्यवस्था, राज्य-संचालन, समाजशास्त्र एवं शरीर-विज्ञान आदि अनेक उपयोगी विषयों का ही वर्णन है। अथर्व वेद में जिन तथाकथित ऊट-पटांग विषयों का वर्णन है, उनका विश्लेषण करने पर प्रतीत होगा कि किस प्रकार अनुवादकों की भूल से अर्थ का अनर्थ कर दिया गया है।

(१) जादू-टोना

प्रथम काण्ड के प्रथम सूक्त में 'मेधाजनन' कर्मों का वर्णन है। कौशिक के मतानुसार गूलर, ढाक, वट, पीपल आदि की समिधाओं का चयन करना, जौ, तिल, चावल आदि की आहुति देना, पुष्टिप्रद पदार्थों का भोजन करना, सोते हुए उपाध्याय के कान में मन्त्र का जप करना और उन्हें भिक्षा

अथर्ववेदाधिकरण

संकलनकर्ता

- मृदुला अग्रवाल -

१९-सी, सरत बोस रोड, कोलकाता

चलभाष : ९८३६८ ४१०५१



लाकर देना, तोता-मैना आदि पक्षियों की जिह्वा बांधना आदि कर्म करते हुए 'ये त्रिवप्ताः आदि सूक्तों का जप करना चाहिए। उपनयन के समय ब्रह्मचारी भी इसका जप करे एवं अर्थार्थी अपने बाएँ हाथ के रक्त में दधि, मधु, जल आदि मिश्रित करके भक्षण करे। इसके अतिरिक्त पुत्र-प्राप्ति, सुन्दर स्वास्थ्य एवं तेजस्वी होने के लिए भी इसका जप करना चाहिए। लेकिन वेद-विद सम्यक् विज्ञ हैं कि 'ये त्रिवप्ता' के चारों मन्त्रों में कहीं भी इस प्रकार के कपोल-कल्पित कर्मों का उल्लेख नहीं है। इस सूक्त में तो बल, ज्ञान एवं विद्या-बुद्धि के वर्द्धनार्थ प्रार्थना है। कल्पकार ने उपर्युक्त तीनों से उपलब्ध समस्त कर्मों को इससे सम्बन्धित कर दिया है। अतः अन्ध-विश्वास के कारण अनभिज्ञ लोग इसको भी मन्त्र की ही टीका मान लेते हैं।

अग्नि में गूलर, वट आदि वृक्षों के काष्ठ की आहुति में एक रूपक है कि जिस प्रकार अग्नि में काष्ठ डालने से प्रकाश होता है, उसी प्रकार गुरु रूपी अग्नि के संसर्ग में आ जाने पर शिष्य के हृदय में भी ज्ञानाग्नि प्रज्वलित हो उठती है। यज्ञ में सुगन्धित द्रव्यों की आहुति देने से जिस प्रकार वातावरण शुद्ध हो जाता है, उसी प्रकार गुरु की संगति से शिष्य की भी बुद्धि अधिकाधिक परिष्कृत होती रहती है। मनुष्य के समान वाणी बोलने वाले पक्षियों को उपमा देकर यह स्पष्ट किया गया है कि जिस प्रकार पक्षियों को पिन्जर-बद्ध करके उन्हें जो सूक्ति सिखाई जाती है वही वे बोलने लगते हैं, उसी प्रकार गुरुगृह रहकर शिष्य भी अपनी वाणी पर नियन्त्रण रखकर वेदाध्ययन में ही उसका उपयोग करें। इससे उनकी विद्या, बुद्धि एवं ज्ञान में वृद्धि होगी। यही इस सूक्त का प्रतिपाद्य विषय है।

(२) चातन-सूक्त -

अविष्ट-भूतपिशाचाद्युच्चाटनार्थ फलीकरण-तुषावतक्षण-

होमादीनि कर्माणि अनेन मन्त्रेण कुर्यात्।

सायणाचार्य ने अर्थ किया है कि मनुष्य-शरीर में प्रवेश करके कष्ट पहुंचाने वाले भूत-पिशाचादि के उच्चाटनार्थ इस सूक्तोक्त मन्त्रों का प्रयोग किया जाये। किन्तु अन्न के रक्षणार्थ भूसी आदि विजातीय द्रव्यों को जैसे कूट-फटक कर पृथक् कर दिया जाता है इसी रूपक से यहाँ यह निर्देश है कि प्रजा को कष्ट प्रदान करने वाले चोर-जार आदि दुष्ट व्यक्तियों को भी राजा शारीरिक अथवा मृत्यु-दण्ड देकर प्रजा का रक्षण करे। इस सूक्त में भूत-पिशाचादिक का कहीं नाम भी नहीं आया है। ज्ञात नहीं, सायण की बुद्धि में यह कल्पना कहीं से आ गई?

मन्त्र है - स्तुवानमग्न आ वह, यातुधानं किमोदिनम्,

त्वं हि देव वन्दितो हस्तं दस्योर्बभूविथ । - अथर्व १।७।१

(हे प्रजावन्दित राजन् ! तुम अग्नि के समान तेजस्वी होकर प्रजापीडक लोगों के हन्ता ओर हिंसाशील, पीड़ादायक, जान-माल के हर्ता राक्षसों को दण्ड देने वाले हो। अतः, दुष्ट पुरुषों को पकड़कर उन्हें दण्ड प्रदान करो।)

देव-प्रकाशमान् राजन्, त्वं हि-तू, अग्नि-अग्निवत् तेजस्वी, वन्दितः-नमस्कार योग्य, स्तुवानं-हिंसाशील, दस्योः-चोर-जार आदि का, यातुधानं-पीड़ादायक, हन्ता-हनन करने वाला है, किमोदिनं आवह-सब तरह से पकड़ ला।

(३) भगम् अस्या वर्च

व्यवहृत माला के अनुसार इस सूक्त में दातून, केशादि को भूमि सात करने की क्रियाओं के द्वारा शत्रु को दुर्भाग्य के गर्त में गिराने का वर्णन है। इसके विपरीत इस सूक्त में कन्यादान एवं वैवाहिक विधियों का उल्लेख है।

भगमस्या वर्च आदिष्यधि वृक्षादिव स्त्रजम्।

महाबुध्न इव पर्वतो ज्योक् पितृष्वास्ताम् ॥ अथर्व. १।१४।१

वृक्षाद् अधि - वृक्ष से, स्त्रजम् इव-फूल के समान, अस्याः-इस (अभिमत कन्या के), भगं - गृहस्थ के योग्य, वर्चः - ब्रह्मचर्य को, आदिषि-स्वीकार करता हैं, पितृषु-अपने माता-पिता के बीच, महाबुध्न-बड़े मूल वाले, पर्वत इव-चट्टान के समान, आस्ताम्-गृहस्थाश्रम में दृढ़ रहे।

इस मन्त्र में ब्रह्मचर्य के पश्चात् समुचित पात्र कन्या के ग्रन्थिबंधन का वर्णन है किन्तु सायण ने इसका वर्णन भी स्त्री-दौर्भाग्य-मूलक किया है।

(४) ये अमावास्यां रात्रिम्

कौशिक ने शत्रुसंहारार्थ कांच के चूर्ण को अन्न में मिश्रण करना इसकी व्याख्या की है-

पेडमावास्यां रात्रि मुदस्थुर्वाजिमत्त्रिणः

अग्निस्तुरीयो यातुहा सो अस्मभ्यमधि ब्रबत् । अथर्व. १।१६।१

ये-जो (दुष्ट पुरुष), अमावास्याम् - प्रकाशरहित, रात्रिम् - तामसी निशा में, अत्त्रिणः - परधन-स्तेयी, ब्राजं-डाकू, उदस्युः - शक्तिशाली हो जाने पर, तुरीयः - विनाशकारी, यातुहा - शत्रुनाशक, अग्निः - सेनापति, अस्मभ्यम् - हमारे लिए, अधिवब्रत्-उपदेश देते हैं। सरलार्थ है कि निशाकालीन अन्धकार में जन-धन-अपहर्ता चोरों को सेनानायक कठोर दण्ड दें।

सीसायाध्याह वरुणः सीसायाग्निरुपावति।

सीसं म इन्द्रः प्रायच्छत् तदङ्ग यातुचातनम् ॥ अथर्व. १।१६।२

यहां सेनापति के कर्तव्य के सम्बन्ध में उल्लेख है कि वह वारुणास्त्र, आग्नेयास्त्र आदि शस्त्रों में सीसे की गोली मिश्रण कर, अथवा जल, अग्नि, वरुण आदि को ऐसी गोलियों का प्रयोग करे जिनके द्वारा शत्रु का नाश हो।

(५) अनु सूर्यमुदयताम् -

इस सूक्त में हृदय रोग की चिकित्सा का वर्णन है। परन्तु कौशिक ने लाल बैल के रोम-मिश्रित जल एवं लाल गोचर्म के ताबीज बाँधने अथवा जूटे भात का लेप लगाकर तोते आति हरे रंग के पक्षियों को आबद्ध करके

रोगादि की मुक्ति का उल्लेख किया है।

अनु सूर्यमुदयतां हृद्योतो हरिमा च ते ।

गो रोहितस्य वर्णेन तेन त्वा परि दध्मसि ॥ १।२२।१

[हे रोगी ! ते-तेरा, हृद्योत - हृदय चमकना, हरिमा च-शरीर के हरित चक्षु नखादि, सूर्यम् अनु - सूर्य उदय होते ही, उदयताम् - नाश हो, गोः सूर्य की किरणें, रोहितस्य - रक्त, किरण (अथवा शाल्मली वृक्ष), वर्णेन - रोग नाशक गुण अथवा फलरस, पुष्य, परिदध्मसि - पुष्ट करते हैं।]

इस मन्त्र में पाण्डु रोग के शमनार्थ सूर्य की रक्त किरणें अथवा शाल्मली वृक्ष के सेवन का वर्णन है।

(६) अमूः पारे पृदाक्वः

सेना-संचालन की कूट-नीति के विरुद्ध, सायण ने भूमि के पार नाग लोक की २१ सर्प-जातियों की केंचुली शत्रु की आंखों में डालें - यह हास्यास्पद अनर्थ कर दिया है।

अमूः पारे पृदाक्वस्त्रिषप्ता निर्जरायवः ।

तासां जरायुर्भिर्यमक्ष्याश्चपिव्ययामस्यघायोः परिपन्थिनः ॥

अथर्व. १।२७।१

इसमें सर्प, प्रचालक (मोर को कलंगी), कृकण (बटेर) तथा पञ्चकुण्ड के चर्म को सुखा कर उन्हें चूर्ण करके उसके घूम को शत्रु सेना में पहुंचा कर शत्रुओं के नेत्र की ज्योति नष्ट करने का विधान बताया है अथवा सर्पाकार व्यूह बनाकर शत्रु की आंखों में भ्रम डालने का विधान बताया है।

अक्ष्यौ अपि व्ययामसि—आंखों की ज्योति का नाश करें।

दूसरा विषय है मणि। प्रथम नौ काण्डों के लगभग ३० सूक्तों में सायणाचार्य ने मणि बांधने का वर्णन किया है। उनके अनुसार किसी भी निर्दिष्ट पदार्थ की गोली या मनका बनाकर ताबीज के समान उसे कण्ठ, बाहु अथवा कटि प्रदेश आदि में आबद्ध करने का विनियोग है। साथ ही विभिन्न मणियों का वर्णन है।

अब यहाँ विचारणीय विषय है कि मणि के सम्बन्ध में वैदिक दृष्टिकोण क्या है? 'मणाति शब्दयतीति मणिः' उपदेश देने वाले लोग मणि कहलाते हैं। इस दृष्टि से गुरु, उपदेशक और नेता आदि मणि के अन्तर्गत आ जाते हैं। अथर्ववेद में विभिन्न मणियों का वर्णन है- कृष्णाल, शुक्ल, वीरणेष, अभीव, हिरण्य, जाङ्गिड्, यव, दशबृक्ष, शत्राक्य, तिलक, अश्वत्थ, हरिणशृङ्ग, सिंहनाभि, अरलु, शरमणि आदि।

कृष्णाल मणि -

अस्मिन् वसु वसवो धारयन्त्विन्द्रः पूषा वरुणो मित्रो अग्निः ।

इममादित्या उत विश्वे च देवा उत्तरस्मिन् ज्योतिषि धारयन्तु ॥

अथर्व. १।९।१

सायण ने इसके अर्थ में कृष्णाल मणि धारण करने के सम्बन्ध में लिखा है। किन्तु इस सूक्त के चारों मन्त्रों में कहीं भी मणि शब्द का उल्लेख नहीं है। वास्तव में इस सूक्त का प्रयोग राष्ट्र-च्युत नृप को पुनः सिंहासनारूढ करने में प्रयुक्त हुआ है। साथ ही राजा को शक्तिशाली होने का उपदेश भी है।

शास्त्रार्थ निम्नलिखित प्रकार से है।

अस्मिन् - इस राजा को, बसवः - अष्टावसु, वसु - तेज, ऐश्वर्य, धारयन्तु - धारण करावें। इन्द्र - ऐश्वर्य - युक्त, वरुणः - सर्वश्रेष्ठ, मित्रः - सबके मित्र, अग्निः - सर्वप्रकाशक, आदित्याः - द्वादश मास, उत च - और, विश्वेदेवाः - विद्वान् पुरुष, इमं - इस राजा को, उत्तरस्मिन् - उत्कृष्ट, ज्योतिषि - राज्य ऐश्वर्य, धारयन्तु - धारण करावें।

शुक्ल वीरणेष का मणि

उप प्रागाद् देवो अग्नि रक्षोहामीवचातनः।

दहन्प द्रवाविनो यातुधानान् किमीदिनः ॥ १।२८।१

देवः - प्रकाशमान्, रक्षोहा-राक्षसों के विनाश, अमीवचातनः - रोगों के किटाणु-नाशक, उपप्रागाद्-हमें प्राप्त हो, किमीदिन-परहर्ता, यातुधान-पीडाकारी, द्रवाविनः - वाणी एवं कर्म में क्रूर, अपदह-ऐसे पुरुषों को दण्डित करें।

सायण ने उद्विग्न पुरुष का उद्वेग दूर करने के लिए सरकण्डे की चार सीकें लेकर आबद्ध करने का विधान लिखा है जिसका मन्त्र में कहीं भी संकेत नहीं है।

अभीवर्त्तमणि वा रथचक्रनेमिमणि अथवा रथनेमि -

अभीवर्त्तन मणिना येनेन्द्रो अभिवावृधे।

तेनास्मान् ब्रह्मणस्पतेऽभिराष्ट्राय वर्धय।

अभिवृत्य सपत्नानाभि या नो अरातयः।

अभि पृतन्यन्तं तिष्ठभि यो नो दुरस्यति। अथर्व. १।२९।१२

अभिवर्त्तमणि -

यः-जो, सपत्नान-हमारी सम्पत्ति या आक्रमणकारी शत्रुओं को, अभिवृत्य-चारों ओर से घेर कर जो, नः--हमारे, अरातयः - कर अदाता, पृतन्यन्तं - आक्रमणकारी सेना, अभितिष्ठ-सामना करके, यः-जो, नः - हमें, दुरस्यति - दुःखदायी उन क्रूर मनुष्यों को, अभितिष्ठ - वश में करो। अर्थात् - ससैन्य वह राजचक्र, जो आक्रमण करके शत्रु-संहार करता है, वह अभीवर्त्त मणि कहलाता है।

कौशिक के मतानुसार विजय-प्राप्ति की कामना से लौह, सीसा, 'रजत एवं ताम्र से पिरोया हुआ मणि राजा गले में आबद्ध करे। पर यह विचारणीय विषय है कि इस अंगूठी से किस प्रकार विजय हो सकती है ?

किन्तु इस सम्बन्ध में वेद का प्रतिपाद्य विषय यह है - (येन मणिना इन्द्रः अभिवावृधे) जिस मणि से ऐश्वर्यशील राजा उन्नति प्राप्त करता है।

(ब्रह्मणस्पते तेन अभीवर्त्तन राष्ट्राय अस्मान् वर्धय) शत्रुओं को दलित करके,

जो सर्वप्रकारेण राज्य सुरक्षित रख सके, वह नरमणि, अभीवर्त्त मणि है।

(महाम् राष्ट्राय सपत्नेभ्यः पराभुवे बध्यताम्-अथर्व. १।२९।४) शत्रुओं से सुरक्षा के लिए राष्ट्र में जिसे नियुक्त किया जाय।

जंगिड मणि - सायण के मतानुसार अर्जुन वृक्ष की लकड़ी आत्मरक्षार्थ एवं

विघ्नों के शमन के लिए बाँधनी चाहिए। परन्तु वेद का प्रतिपाद्य विषय यह है (दक्षयाणा रणाय अरिष्यन्तः सदैव विभूमः) युद्ध में शत्रुओं पर बल प्रयोग के समय इसकी अवश्यकता होती है। वह स्वयं (सहस्रवीर्यः--अथर्व.) सहस्रशक्ति सम्पन्न होता है। अतः, युद्धकाल में (व्ययामे सर्वाक्षांसि महामहे) दुष्ट शत्रुओं को पराजित करता है। अतः इस मणि से वेद स्पष्ट करता है कि नरशिरोमणि सेनाध्यक्ष कैसा होना चाहिए? इसी प्रकार अन्य मणियों के सम्बन्ध में भी जानना चाहिये। इन मणियों का अर्थ--राज्य-संचालन, शत्रु-पराजय, सेनापति का चुनाव एवं उनके कर्तव्य आदि से संबन्धित है।

कृत्या

सायण के अनुसार 'मन्त्रौषधादिभिः शत्रोः पीडाकारि कृत्याम' - शत्रुओं को पीडा देने वाली कृत्या होती है। कृत्या निखन्नार्थ गच्छेत्--कोई मनुष्य इस कृत्या को गाड़ने के लिए जावे।

कृत्या अभिचारकर्मभिरुत्पादिताः पिशाच्यः।

[अभिचार कर्मों से उत्पादित पिशाचिनी कृत्याएँ हैं]। वेद में चार प्रकार की कृत्याएँ बतायी गई हैं-

याः कृत्या आङ्गिरसीयाः कृत्या आसुरीयाः कृत्याः, स्वयं कृता या उ चान्येभिराभृताः उभयीस्ताः। परा यन्तु परावतो नर्वात नाव्याऽति। अथर्व. ८।५।९

(याः) जो, (कृत्याः) संहारकारी क्रियाएँ (आंगिरसी) वैज्ञानिकों द्वारा बताई हुई, (याः कृत्या आसुरी) शक्तिशाली पुरुषों-द्वारा प्रयोग में लायी हुई, (याः कृत्याः स्वयं कृता) जो हिंसात्मक कार्य प्रजा स्वयं करती है, (या उ अन्येभिः) वे संहारकारी क्रियाएँ जो शत्रुओं द्वारा प्रयोग में लायी जाती हैं, वे दोनों आधिदैविक, आधिभौतिक विपत्तियाँ दूर चली जावें।

दूसरे मन्त्र में इसका रूप यह है--

विभिन्दती शतशाखा विभिन्दन् नाम ते पिता।

प्रत्यग् विभिन्धि त्वं तं यो अस्माँ अभिदासति ॥ अथर्व. ४।१९।५

(तू सौ शाखाओं में फूटती है। तेरा पिता नाना शाखाओं में फूटने वाला है। तू हमारे आक्रमणकारी शत्रु को तोड़-फोड़ दे।)

इसके आगे मन्त्र में कहा गया है -

असद् भूम्याः समभवत् तद्यामेति महद् व्यचः।

तद् वै ततो विधूपायत् प्रत्यक् कर्तारमृच्छतु ॥ अथर्व. ४।१९।६

(भूमि पर सामान्य छोटे रूप में रहने वाला पदार्थ आकाश में विस्तृत होकर प्रज्वलित होता हुआ विरोधियों का नाश करता है।)

उपर्युक्त मन्त्रों से प्रतीत होता है कि वास्तव में ये कृत्याएँ कोई बृहत्काय बम की परिचायिका है जिनका आकाश में जाकर विस्फोट होता है और ये शत्रु भागों में विभक्त होकर प्रजा का नाश करती है। इनमें से निकलने वाले छरों को पिशाची की संज्ञा दी गई है। किन्तु सायण के अनुसार 'सहदेवी' बूटी का ताबीज बनाकर व्यवहृत करने पर शत्रुओं का नाश होता है।

अथर्ववेद के दसवें काण्ड में पुनः कृत्याओं का वर्णन है -

शेष आगामी अंक में...

छाछ-मट्ठा तक्र

आर्युवेदिक मत- सुश्रुत छाछ को मधुर, खट्टी, कसैली, उष्णवीर्य, लघु-रूक्ष-अग्निदीपक, मधुर विपाक वाली, हृद्य एवं सूजन, अतिसार ग्रहणी, पाडुरोग, अर्श प्लीहा रोग, गुल्म अरोचक, विषम ज्वर, तृषा लार के स्त्राव-शूल-भेद-कफ और वायु को दूर करने वाली मानते हैं।

चरक- मंदग्न और अतिसार में छाछ को अमृत तुल्य मानते हैं।

भव मिश्र- छाछ का सेवन करने वाला मनुष्य कभी रोगों का शिकार नहीं होता, छाछ से नष्ट होने वाले रोग पुनः उत्पन्न नहीं होते। आयुर्वेद में इसका महत्व इस प्रकार बताया गया है -

यथा सुराणां अमृतं सुखाय तथा नराणां भुवि तक्राहू - अर्थात् जिस प्रकार स्वर्ग में देवों को सुख देने वाला अमृत है उसी प्रकार पृथिवी पर मनुष्य को सुख देने वाली छाछ है। छाछ का मधुर रस पित्त को शान्त करके पोषण प्रदान करता है।

वैज्ञानिक मत- छाछ में विटामिन 'सी' है अतः उससे शरीर की रोग प्रतिकार क्षमता बढ़ती है तथा तत्वों का आरोग्य और सौन्दर्य सुरक्षित रहता है छाछ में लैक्टिक एसिड होने से यह पाचन तंत्र के रोगों में लाभदायक सिद्ध होती है। छाछ में प्रोटीन, लोह आदि तत्व हैं। अतः यह अपोषण से होने वाले विकारों में उपयोगी है।

क्षत-विक्षत लोगों व दुर्बल तथा मूर्छा भ्रम और रक्त पित्त के रोगियों को गर्मियों में छाछ का सेवन कभी नहीं करना चाहिए।

छाछ-शीतल-हल्की पित्त श्रम तथा तृषा को दूर करने वाली वायुनाशक और कफ कारक है। नमक से युक्त छाछ अग्निवर्धक है। छाछ-जहर के लार के स्त्राव, विषम ज्वर, पाडु रोग, भेद, अर्श, मूत्र, कृच्छ, भगन्दर, मधुमेह, वायु, गुल्म, अतिसार, गुदा, तिल्ली, प्लीहा, अरुचि, श्वेत कुष्ठ, जहर के रोगों, कोढ़, सूजन, तृषा और कृमियों को दूर करती है। संग्रहणी सहस्र रोगों में रोगियों को गाय के दूध की छाछ में सोठ और पीपर का चूर्ण डालकर सेवन करना चाहिए। आहार में केवल छाछ और चावल का सेवन करना चाहिए।

प्रयोग :- १. छाछ से चेहरा धोने से चेहरे की कालिमा, दाग, चिकनाहट दूर होती है तथा चेहरा तेजस्वी व आकर्षक हो जाता है। २. सौंठ, काली मिर्च, पीपर और सेंधा नमक समान हिस्सों में लेकर छाछ में डालकर पीने से अजीर्ण दूर होता है। ३. गाय की ताजा फीकी छाछ पीने से रक्त वाहिनियों का रक्त शुद्ध होता है। ४. गाय की छाछ में मिर्च, सौंठ, पीपर मिलाकर पीने से अर्श में लाभ होता है। ५. छाछ आतों के रोगों में लाभदायक है।

हरिश्चन्द्र आर्य

अधिष्ठाता उपदेश विभाग, अमरोहा उ.प्र.

पुस्तक परिचय

भागवत दर्पण लेखक : डॉ. सोमदेव शास्त्री ९८६९६ ६८१३०

प्रकाशक : वैदिक मिशन मुम्बई मूल्य : २० पृष्ठ संख्या : ३१

वर्तमान समय में अंधविश्वासों का साम्राज्य है। अन्धानुकरण एवं अन्धविश्वास इतना बढ़ गया है जिसका कोई पारावार नहीं। हमारे धर्म के वेद, वेदांग, रामायण, महाभारत के मूल रूप को भूलते जा रहे हैं। मिथ्यात्व में विश्वास बढ़ता जा रहा है। शिक्षित वर्ग भी उसका अनुसरण कर रहा है। बुद्धि की पराकाष्ठा हो गई। राम, श्री कृष्ण को अवतारी बताकर उन पर नाना प्रकार का लाच्छन आरोपित कर रहे हैं। आज भागवत कथाकारों की होड़ सी लग गई है। महिला भागवती भी पीछे नहीं है। रामलीला, रासलीला द्वारा भौण्डा प्रदर्शन किया जा रहा है। भागवत के नाम श्रवण एवं कथन से ही जन्म जन्मान्तर के पाप छूट जाते हैं। सौभाग्यशाली ही भागवत कथा का श्रवण कर सकता है। तालियों की गड़गड़ाहट नृत्य आदि कर महिलायें भाव विभोर हो जाती हैं। कथा में प्रायः ९० प्रतिशत से ऊपर महिलाएं होती हैं। भागवती उन्हें येन केन प्रकारेण लूटने का नाटक करते हैं। वास्तविकता क्या है? सही तथ्य कोई बताने का प्रयास नहीं करता। गोपियों के वस्त्र चुराना, माखन चोरी, सौलह हजार रानियां, चूड़ी बेचने आदि कृष्ण जो योगिराज थे उन्हें कलंकित करने के सिवा कुछ भी नहीं। अन्य धर्मावलम्बी ऐसे साहित्य को पढ़कर कटाक्ष करते हैं हम सहज में टाल देते हैं। ऐसे में

लेखक ने आडम्बर को मिटाने के लिए, महर्षि की विचारधारा को व्यक्त करते हुए अपनी लेखनी द्वारा वास्तविक ज्ञान को प्राप्त करने के लिए बल दिया। अपना पूर्ण श्रम थोड़े-थोड़े कथन से आडम्बर से दूर रहकर वास्तविकता को अपनाने पर बल दिया है।

पुराणों में गप्पे कूट-कूट कर भरी गई है। गुण, कर्म, वास्तविकता, धर्म के मर्म को समझना आवश्यक है। लेखक की भावना का आदर करते हुए लघु पुस्तिका का एक बार अवश्य पठन करें आपके ऊपर वास्तविक प्रभाव पड़े और भेड़ चाल को छोड़ दें। कृष्ण के गुणों को धारण करें।

देव मुनि

अजमेर (राज.)

जीवन संग्राम

जीवन संग्राम सुख-दुख एक छांव, आती है जाती है।

दुःख तो अपना साथी है, सुख भी साथी है॥

जीवन एक घटना है संघर्ष है नौका है।

एक मेला है, झमेला है तपस्या मौका है॥

सुख-दुःख का साथ कभी खुशी कभी गम।

हिम्मत से काम लेंगे तो सुखी होंगे हम॥

रात के पीछे दिन, दिन के पीछे रात है।

पुरुषार्थ, नेकी, ईश्वर पर भरोसा करामात है॥

यदि शांति और सूझबूझ से काम लिया।

तो समझना ईश्वर ने तेरा हाथ थाम लिया॥

दुःख समस्या, बीमारी में कभी न घबराना।

संघर्ष करना, मेहनत करना, आगे बढ़ना॥

यदि लगे रहे काम से तो दुःख भाग जायेंगे।

परिवार सुखी रहेगा, भाग्य जाग जायेंगे॥

भाग्य को कोसना, ईश्वर को दोष देना नादानी है।

कर्मों का योग व फल का भोग सबकी कहानी है॥

पुरुषार्थ में दम हो तो समय बदल जाता है।

देखते ही देखते आपका जीवन बदल जाता है॥

आर्य मोहनलाल दशोरा

अधमर्षण मन्त्रों की व्याख्या



— स्वामी हरीश्वरानन्द सरस्वती —

बी/५४, तेजेन्द्र नगर-७, अहमदाबाद

चलभाष : ८१५५०५५२६०

कुछ व्यक्तियों का यह कहना है, कि उनका मन संध्या, उपासना में नहीं लगता है। वैसे तो मन एक जड़ पदार्थ है। इस जड़ पदार्थ मन को नियंत्रण में करने के लिये ऋषि, मुनियों ने अनेकानेक उपायों का वर्णन किया है, हमारा मन यहां मन के विषय पर चर्चा करने का नहीं है, इस विषय पर फिर कभी चर्चा की जायेगी। **संध्या**, उपासना में मन न लगने के अनेकानेक कारण हो सकते हैं। मगर उन में से एक प्रमुख कारण यह है, कि जीवात्मा जब-जब मनुष्य योनि में कर्मानुसार जन्म लेता है तो जाने-अनजाने में बहुत सारे पाप कर्म करता रहता है। क्यों कि मानव योनि ही एक ऐसी योनि है, जिसमें जीव कर्म कर सकता है और उस पर भी मनुष्य को कर्म करने की स्वतंत्रता मिली हुई है। तो मानव योनि में वास करने वाला जीव मनमाने ढंग से कार्य करने के लिये स्वतंत्र है। उसे कोई रोकने-टोकने वाला नहीं होता। मानव को काम, कोध, लोभ, मोह आदि के माया जाल में फंस कर कर्म, अकर्म का ध्यान ही नहीं रहता है। जो व्यक्ति अपने कर्मों को जितना अच्छा बना लेगा, उतना शीघ्र उसका मन **संध्या उपासना** में लगने लगेगा।

संध्या के मन्त्रों में केवल तीन अधमर्षण मन्त्र आये हैं। अघ का अर्थ होता है, पाप और मर्षण का अर्थ होता है **मसलना** अतः अधमर्षण का अर्थ हुआ पाप या पापों को मसलना। जिस प्रकार एक कागज के टुकड़े को हाथ में लेकर मसल कर फैंक देना ही ठीक होता है इसी प्रकार पापों को पहचान कर मसल देना होता है। वास्तव में अधमर्षण के ये तीन मन्त्र ऐसे हैं जो पापों को मसलने में समर्थ हैं। ध्यान रहे, कि इसका अर्थ यह कतई नहीं है, कि किये हुए कर्मों को समाप्त किया जा सके, जैसे कि पौराणिक भाई तथा अन्य मतावलम्बी कहते हैं, कि राम-राम कहो, गंगा में स्नान करो, खुदा पर ईमान लाओ, ईसा की शरण में आओ तो जितने भी पाप किये हैं सब धुल जायेंगे या माफ हो जायेंगे। ऐसा इन मन्त्रों से कुछ होने वाला नहीं है।

इन मन्त्रों का भाव यह है, कि परमात्मा इतना समर्थ तथा शक्तिशाली और ज्ञानवान है, कि उसने समस्त सृष्टि का निर्माण किया है, स्थिर रखा है और पालन कर रहा है। उससे डर कर पाप कर्म नहीं करने चाहिये, क्योंकि वह सब कुछ देख, सुन, जान रहा है, और कण-कण में व्याप्त है।

पहला मन्त्र : ओम् ऋतं च सत्यं चाभीध्दात्तपसोऽध्यजायत ।

ततो रात्रयजायत ततः समुद्रोऽर्णवः ॥

पहले मन्त्रों की पहली पंक्ती में अध्या और तपस शब्द आये हैं, अध्या कहते हैं ज्ञान को, कि परमात्मा के पास इतना ज्ञान है कि वह अपने अनन्त ज्ञान से, और तपस कहते हैं सामर्थ्य को, अतः उसने अपने अनन्त ज्ञान और सामर्थ्य से चारों वेदों की रचना की, और सत्यम् च अर्थात् उसी ज्ञान और सामर्थ्य से समस्त ब्रह्माण्ड की रचना की। ततः उसी परमात्मा ने अपने ज्ञान और सामर्थ्य से प्रलय रूपी रात्रि को बनाया। ततः उसी परमात्मा ने अपने

अनन्त ज्ञान और सामर्थ्य से पृथ्वी पर समुद्र की रचना की, तथा उसी ज्ञान और सामर्थ्य से अर्णवः अर्थात् बादल रूपी समुद्र को भी बनाया। बादलों में भी बहुत सारा पानी होता है, बादलों में भी पानी का एक बहुत बड़ा समुद्र है जितना बड़ा समुद्र हम पृथ्वी पर देखते हैं, उससे कितना ही बड़ा विशाल समुन्द्र समस्त ब्रह्माण्ड को घेरे हुये है। हमें केवल वर्षा के मौसम में ही आकाश में बादल दिखाई देते हैं। इतना ही नहीं है, प्रत्येक मौसम में ऊपर आकाश में पानी रहता ही है, यदि ऐसा न हो तो क्या औस बिना पानी के पड़ती है? यही बात सिद्ध करती है कि, समस्त ब्रह्माण्ड पानी से घिरा हुआ है। यह परमात्मा का कितना बड़ा ज्ञान और सामर्थ्य है।

इस प्रकार यह एक मन्त्र पूरा हो गया, मगर पापों को मसलने की बात अभी तक तो आई नहीं। अब अगले मन्त्र में देखते हैं, शायद कोई बात मिल जाय।

दूसरा मन्त्र : समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो ऽ अजायत ।

अहोरात्राणि विदधद्विष्वस्य मिषतो वशी ॥

पृथिवी के बीच में समुद्र बनाने के साथ-साथ संवत्सरो, क्षण, मुहूर्त, प्रहर आदि बनाये। पक्ष, माह, वर्ष बनाये। यहां पर दिन और रात्रि को सम्मिलित नहीं किया है, यहां पर अहो का अर्थ है दिन अर्थात् सृष्टि और रात्राणि का अर्थ प्रलय से है। अगले मन्त्रों में दिन अथवा रात्रि का उल्लेख किया गया है। इस प्रकार परमात्मा ने समस्त विश्व अर्थात् समस्त ब्रह्माण्ड की रचना करके अपने वश में रखता है। इस प्रकार दूसरा मन्त्र भी समाप्त हो गया, मगर कहीं भी पापों को मसलने की अर्थात् समाप्त करने की बात कहीं पर भी नहीं आई। चलो देखें अगला मन्त्र क्या कहता है।

तीसरा मन्त्र : सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् ।

दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ।

इस प्रकार समस्त ब्रह्माण्ड को रचने वाले परमपिता परमात्मा ने ब्रह्माण्ड की रचना की धारण किया और पालन भी, इससे पहले वाले कल्पों की भांति कर रहा है। इसका यहां यह तात्पर्य है, कि इस वर्तमान कल्प की भांति न जाने कितने कल्पों की रचना हो चुकी है। अतः यह सृष्टि और प्रलय का क्रम सदैव से चलता आ रहा है, और आगे भी चलता रहेगा। उसी परमात्मा ने पूर्व कल्प की भांति इस कल्प में भी पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा को बनाया। पृथ्वी को, अन्तरिक्ष को और धौलोक को और उन लोक लोकान्तरो को भी बनाया जिन्हें हम इन आखों से देख नहीं सकते। उपरोक्त का भाव यह निकला कि जिस प्रकार न जाने कितने कल्पों से यह सृष्टि क्रम चलता आ रहा

है, और न जाने कब तक चलते रहेगा, इस बात को तो परमात्मा के सिवाय कोई जान ही नहीं सकता।

इसी प्रकार हम जीवात्माओं का जीवन और मृत्यु चक्र चलता आया है और न जाने कब तक चलता रहेगा, इसे भी परमात्मा के सिवाय कोई नहीं जान सकता है। अतः परमात्मा संसार में जो भी बनाता बिगाड़ता है वह सब हम जीवात्माओं के लिये सुख पहुंचाने के लिये ही तो करता है। यदि सृष्टि का निर्माण करता है तो भी जीवात्माओं के भले के लिये ही करता है। और यदि प्रलय भी करता है तो भी जीवात्माओं के भले के लिये ही करता है, क्योंकि सृष्टि में सुख है, और प्रलय में दुःख है। यदि सोचा जाय तो सुख भोगने की भी एक सीमा होती है। अर्थात् सुख भोगते-भोगते रहने से उस रस में सुख आना समाप्त हो जाता है। तब कुछ परिवर्तन की आवश्यकता होती है। तो परमात्मा इस प्रकार प्रलय करता है तो भी जीवात्माओं की भलाई के लिये ही करता है। प्रलय के पश्चात् जो सुख मिलने वाला है, इसीलिये ही तो परमात्मा प्रलय करता है। वह भी जीवात्माओं के भले के लिये ही करता है। ताकि उन्हें आने वाले समय में सुख मिल सके। यह मन्त्र भी समाप्त हो गया, मगर यहां पर भी पापों को मसलने की कोई बात नहीं आई।

परमात्मा ने क्षण, पल, मुहूर्त, प्रहर, माह, वर्ष आदि की रचना की वह भी जीवात्मा की सुविधा के लिये ही तो की। क्योंकि समय की यदि रचना नहीं की होती तो जीवात्माओं को असुविधा होती, क्योंकि दिन-रात का पता ही नहीं चलता, तो हम जीवात्मायें समय का सदुपयोग किस प्रकार कर पातीं। इस लिये परमात्मा ने जो भी व्यवस्था की है, वह सब हम जीवात्माओं के भलाई के लिये ही तो की है।

परमात्मा सर्वज्ञ है, कण-कण में व्याप्त है, व्याप्त था और व्याप्त रहेगा। हम जीवात्मा शरीर बदलते रहते हैं। आज मैं, कल तुम, हो सकता है, इसी प्रकार आज तुम, कल मैं, हो सकता हूँ। आत्मा परिवर्तन शील है, परमात्मा अपरिवर्तन शील है। परमात्मा जो भी करता है, वह पूर्ण ही करता है, और हम जीवात्मा जो भी बनाते हैं, वह अपूर्ण और क्षति पूर्ण बनाते हैं। बस इन तीनों अधर्मपण मन्त्रों में कहा गया कि परमात्मा ने सृष्टि को बनाया, धारण किया और पालन कर रहा है। इस के अतिरिक्त इन मन्त्रों में कुछ भी नहीं है।

मगर फिर भी ये मन्त्र अधर्मपण मन्त्र कहलाते हैं। इन मन्त्रों में कहीं भी पापों को समाप्त करने अथवा मसलने की बात नहीं कही गई है। अब दो, चार उदाहरण देकर समझाने का प्रयत्न करते हैं कि यदि हमसे कोई भी व्यक्ति शक्ति में थोड़ा भी अधिक हो, तो पूरा समाज उससे डरता है, चाहे भले ही वह किसी से कुछ भी नहीं कहता हो। मगर हम उस सर्वशक्तिमान परमात्मा से नहीं डरते और निरन्तर पाप करते रहते हैं। इसी बात को समझाने का प्रयास आगे किया जा रहा है।

उदाहरण एक : यदि जिस किसी व्यक्ति के हाथ में लाठी या डण्डा हो तो, उससे सभी डरते हैं और बच कर चलते हैं, चाहे वह किसी से कुछ भी नहीं कह रहा हो, अपने रास्ते चुप चाप जा रहा हो फिर भी हम उससे डरते हैं, कि पता नहीं कब किस बात पर बिना मतलब के बिगड़ खड़ा हो, और तकरार

हो जाये।

उदाहरण दो : यदि कोई पुलिस वाला सामान्य वस्त्रों में हो तो कोई भी उससे डरने वाला नहीं, और यदि उसी व्यक्ति को हम पुलिस की वर्दी में हाथ में डण्डा लिये हुये देखते हैं, तो हम सब उस से दूर ही रहना पसन्द करते हैं। कहते हैं कि पुलिस वाले की दोस्ती भी बुरी और दुश्मनी भी बुरी। अतः या तो दूर ही से बच के निकल जायेंगे और यदि आमना-सामना हो भी गया तो हाथ जोड़ कर नमस्ते कर चलते बनेंगे।

उदाहरण तीन : इसी प्रकार यदि हमसे कोई शरीर में ताकतवर दिखता है, तो भी हम सब उस से डरते हैं। पता नहीं कब किस बात पर बिना मतलब के दो हाथ रख दे, और हमारी हालत खराब हो जाये।

उदाहरण चार : इसी प्रकार यदि कोई धनवान व्यक्ति है, तो उससे भी हम सभी डरते हैं, कि पता नहीं कब हमें उससे आर्थिक मदद की आवश्यकता पड़ जाये, तो मांग कर अपना काम चला लेंगे। ऐसे व्यक्ति को भी सभी झुककर सलाम करते हैं। चाहे वह दस नम्बरी ही क्यों न हो।

उदाहरण पाँच : और सब से बड़ी बात यह है, कि हम प्रत्येक नागरिक चाहे वह किसी भी देश या प्रान्त का रहने वाला क्यों न हो उसे अपने देश के संविधान के नियमों का पालन करना ही होता है। अर्थात् संविधान में दिये गये नियमों का पालन करना पड़ता है। यदि कोई भी नागरिक अपने देश के संविधान के नियमों का पालन नहीं करता है, तो उसे राज्य के अधिकारी नियमानुसार उसे दण्ड दिलाते हैं, नियम भंग कानून के अन्तर्गत।

अब हम यहां उपरोक्त पांच उदाहरणों की तुलना आर्य समाज के दूसरे नियम के कुछ प्रावधानों को लेकर करते हैं। कि (१) परमात्मा सर्व शक्तिमान है, उस से बढ़ कर कोई अन्य नहीं, और न ही कोई उसके बराबर ही है। तब भी उस से कोई नहीं डरता, और पाप पर पाप किये जाते हैं। (२) दूसरे जिसने समस्त सृष्टि का निर्माण किया, धारण किया और पालन कर रहा है। फिर भी उस से कोई नहीं डरता है। (३) वह परमात्मा सब से बड़ा दण्डाधिकारी है, फिर भी उस से कोई नहीं डरता है। (४) वह परमात्मा सब से बड़ा न्यायकारी है, उसके न्याय में कोई पक्षपात नहीं होता है, फिर भी उस से नहीं डरते हैं। (५) वह परमात्मा सर्वेश्वर है, अर्थात् संसार के जितने भी सुख, वैभव, ऐश्वर्य हैं उन सभी का स्वामी परमात्मा ही है। उस से बढ़कर कोई भी धनवान, ऐश्वर्यवान नहीं है फिर भी हम उस से डरते नहीं हैं। हम समझते हैं कि हमसे बढ़ कर संसार में कोई दूसरा धनवान है ही नहीं। (६) उस परमात्मा ने अपना वेदों रूपी संविधान बनाया है, जिन में समस्त ज्ञान, विज्ञान भरा पड़ा है। जीवन जीने की समस्त कलायें भरी पड़ी हैं। उनको देखने, पढ़ने तथा सुनने की तो बात ही जाने दीजिये, उनकी तरफ कोई देखना भी पसंद नहीं करता है।

तो अब यहां तुलनात्मक दृष्टि से देखते हैं, तो.....

(१) जिस के हाथ में डण्डा है, उस से हम सभी डरते हैं, मगर जो सर्व शक्तिमान है, उस से कोई नहीं डरता है।

(२) एक सामान्य पुलिस वाले से सभी डरते हैं, मगर जो सर्व सत्ताधीश है,

उस से कोई भी नहीं डरता है।

- (३) जो व्यक्ति शरीर से कुछ अधिक ताकतवर है, जो सामान्य व्यक्तियों से कुछ अधिक काम कर सकता है, अथवा कुछ अधिक वजन उठ सकता है उससे भी हम सब डरते हैं, मगर जो समस्त ब्रह्माण्ड का भार न जाने कब से उठा रहा है, उससे कोई भी नहीं डरता है।
- (४) जो धनवान है, उससे भी हम सब स्वार्थवस डरते हैं, मगर जो सब प्रकार के धनों का स्वामी है ऐश्वर्यवान है, उससे हमको डर नहीं लगता है।
- (५) सभी देशों के नागरिक अपने अपने देशों के संविधान का सम्मान करते हैं, मगर परमात्मा ने जो मनुष्य जीवन के लिये उपयोगी वेद रुपी जो संविधान बनाया है, उसका कोई सम्मान नहीं करता है।

यहाँ कहने का भाव यह है, कि उपरोक्त तीनों अधमर्षण मन्त्रों में परमात्मा की जिन-जिन शक्तियों का वर्णन किया गया है, उन-उन शक्तियों का यदि हम सदैव स्मरण करें, कि परमात्मा से अधिक कोई शक्तिमान नहीं है, परमात्मा से अधिक कोई धनवान या ऐश्वर्यवान नहीं है, उससे बड़ा कोई न्यायकारी नहीं है, उससे बड़ा कोई दण्डाधिकारी नहीं है। वह प्रतिपल प्रत्येक जीवात्मा को देख, सुन, जान रहा है। तो परमात्मा से हमें डर लगने लगेगा। तो हम पाप कर्म नहीं करेंगे। मगर यहां तो यह हो रहा है, कि हमें प्रभु से डर ही नहीं लगता है। हम यह सोचते हैं कि हमें कोई देख, सुन, जान ही नहीं रहा है। हम अपनी मनमानी पर मनमानी करते चले जा रहे हैं। पाप पर पाप करते चले जा रहे हैं इन पापों के परिणाम स्वरूप न जाने कितने कोटि वर्षों से मनुष्योंतर

यौनियों में कष्ट भोगते चले आ रहे हैं। यदि हमें थोड़ा सा भी उस जगत नियन्ता का भय होता तो हम ये पाप करने से बच जाते और मोक्ष सुख का आनन्द भोग रहे होते।

आज का मानव तो हर प्रकार के नियमों को तोड़ने में ही अपनी सफलता समझता है। चाहे वे नियम व्यक्तिगत हो, चाहे पारिवारिक हों, चाहे सामाजिक हों या फिर देश हित में ही क्यों न हो।

आज का व्यक्ति सोचता है, कि राजकीय नियम तोड़ने में पकड़े गये तो रिश्तत देकर छूट जायेंगे, और यदि धार्मिक नियम भंग करते हुए पकड़े गये तो, पण्डे-पुजारी, अनेकानेक मन्दिरों के देवी-देवता तो हमारे जड़ खरीदे हुए गुलाम हैं ही, पुजापे में पुजारी जी को कुछ दक्षिणा अधिक दे देंगे, और प्रसाद में भी कुछ अधिक वृद्धि कर देंगे, और यदि कुछ अधिक हुआ तो गंगा स्नान कर आयेगे तो सभी पापों से मुक्ति मिल ही जायगी।

इसी लिये महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने **संध्या, वन्दना** में ऋग्वेद के मण्डल १० अध्याय १९० के इन तीन १, २, ३ मन्त्रों को चुन कर रखा है, कि परमात्मा की शक्तियों को ध्यान में रख के उनसे डरो, और पाप कर्मों से दूर रहो। नहीं तो संसार रूपी तेली के कोल्हू में यों ही पिसते आये हो और यों ही पिसते रहोगे और अपना तेल निकालते रहोगे। अर्थात् आवागमन के चक्कर में यों ही आते-जाते रहोगे। न प्रभु के दरबार में रिश्तत चलती है, न मन्दिरों में चढ़ाया हुआ प्रसाद ही काम आता है और न पण्डा पुजारियों को दी गई दक्षिणा (रिश्तत) ही काम आयेगी। यहां तो प्रभु के सामने आत्म समर्पण ही काम आयेगा। ●

पृष्ठ ९ का शेष भाग

मूल से जुड़ो-जो...

मानव भूल जाता है कि सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदिमूल ईश्वर है। विज्ञान के यशस्वी भारतीय प्राध्यापक स्व. श्री स्वामी सत्यप्रकाश जी बड़े सरल शब्दों में एक गंभीर बात कहा करते थे। मनुष्य मूर्ति पूजा करता है। मनुष्य स्वयं अपने हाथों से मूर्ति बनाता है। कभी तो मूर्ति को ही भगवान मानकर पूजा करता है तो कभी मूर्ति में भगवान मानकर पूजा करता है। मनुष्य कुछ भी मानकर पाषाण पूजा करे उसे एक बात समझ लेनी चाहिए कि जिस वस्तु को भी मनुष्य का हाथ लगता है भगवान की भावना वहाँ से भाग जाती है। मैं इसका कर्ता हूँ यह भावना जुड़ जाती है। सर्वव्यापक भागकर जाएगा कहाँ? यह बात आगे स्पष्ट हो जाएगी।

स्वामी जी कहा करते थे कि मनुष्य को प्रभु ने मानो यह वरदान दे रखा है कि जिस वस्तु को भी उसका हाथ लगेगा उसमें भगवान नहीं रहेगा। पर्वत की गोदी में पड़े एक पत्थर को लीजिए यह पत्थर किसने बनाया? उत्तर है- ईश्वर ने बनाया। इसको तोड़े! इसके एक-एक टुकड़े को किसने बनाया? भगवान ने। अंगूर किसने बनाया? भगवान ने। अंगूर को काटें। उसमें रस है। रस किसने भरा? प्रभु ने। अब पर्वत की गोदी से एक पत्थर लें उसे जयपुर लाएँ। मनुष्य अपनी कला दिखाता है। उसी पत्थर से मूर्ति बनाई गई। बड़ी

सुन्दर मूर्ति। यह सुन्दर मूर्ति किसकी कारीगरी है? मनुष्य की। अंगूर से शराब बनी। कब जब मनुष्य का हाथ लगा। दाक्षासव बना। कब? जब मनुष्य का हाथ लगा। लोहा खान से निकला तो भगवान का था। मनुष्य का हाथ लगा तो टाटा का गार्डर कहलाया। अब कोई नहीं कहता कि गार्डर ईश्वर का है। प्रत्येक वस्तु अपने मूल स्वरूप में ईश्वर की कृति है। जब मनुष्य का हाथ लगता है तो सब यही कहते हैं कितनी सुन्दर है। अब ईश्वर की कृति नहीं। ईश्वर वहाँ कहाँ? यह तो ठीक है कि सर्वव्यापक कहीं जा नहीं सकता परन्तु मनुष्य की कृति आगे आ गई। प्रभु भावना ओझल हो गई। मनुष्य द्वारा निर्मित कोई भी वस्तु ईश्वर की प्राप्ति का साधन हो ही नहीं सकती। कितना अनर्थ है कि विश्व-विधाता का पूजा के नाम पर घोर अपमान किया जाता है। ईश्वर की कृति को तुच्छ बनाकर मनुष्य अपनी कृति को श्रेष्ठ घोषित करके पूजा का आडम्बर करता है। पुष्प परमेश्वर की कृति है। मूर्ति मनुष्य की। मनुष्य अपनी बनाई प्रतिमा को पूज्य मानकर प्रभु का बनाया पुष्प उस पर चढ़ाता है। मूर्ति का यह आदर सुमन (पुष्प) का निरादर है। इस क्रिया कलाप को आप क्या कहेंगे? यह जड़ता की प्रतीक तो है ही। इससे यह भी विदित होता है कि मनुष्य में अहंकार कितना है। अपनी कला को श्रेष्ठ और परमेश्वर की कृति को हीन समझना अहंकार नहीं तो क्या है? यह सब कुछ क्यों हो रहा है? मूल की एक भूल से। ●

वैदिक विज्ञान में पदार्थों का वैज्ञानिक वर्गीकरण



- कृपाल सिंह वर्मा -

ए/१६३, गोविन्द पुरम, गाजियाबाद (उ.प्र.)

चलभाष : ९९२७८८७७८८

वैदिक विज्ञान में पदार्थों को पांच भागों में बांटा गया है (१) पृथ्वी (२) जल (३) अग्नि (४) वायु (५) आकाश स्थूल से सूक्ष्म की ओर इस प्रकार हैं - पृथ्वी-जल-अग्नि-वायु-आकाश पदार्थ निर्माता का क्रम इस प्रकार है आकाश-वायु-अग्नि-जल-पृथ्वी-स्थूल पदार्थ के अन्दर सूक्ष्म पदार्थ का निवास हो सकता है। अर्थात् पृथ्वी अन्दर हो सकने वाले पदार्थ- (१) जल (२) अग्नि (३) वायु (४) आकाश, जल के अन्दर - (१) अग्नि (२) वायु (३) आकाश, अग्नि के अन्दर- (१) वायु (२) आकाश, वायु के अन्दर- (१) आकाश, आकाश के अन्दर कोई पदार्थ नहीं हो सकता।

(१) आकाश को समझना अत्यन्त आवश्यक है। आकाश तथा परमाणु दोनों ही नित्य है। इसलिए पहले अवस्था में भी रहते हैं। परन्तु प्रलय अवस्था में इनमें शब्द अर्थात् ध्वनि उत्पन्न करने का गुण नहीं होता। सृष्टि निर्माण से प्रारम्भ से जब परमात्मा अपनी प्राण शक्ति से परमाणुओं को उनके केन्द्र पर क्रियाशील कर देता है तो शब्द अर्थात् ध्वनि की उत्पत्ति होती है। शब्द का गुण जिस पदार्थ के आश्रित है वही आकाश है। इस प्रकार आकाश तत्व की उत्पत्ति पूर्ण रूप से वैज्ञानिक है। आकाश तत्व एक स्थिर पदार्थ है अर्थात् आकाश में गति नहीं होती। जैसे तालाब का पानी स्थिर होता है। उसमें पत्थर डालने से जल तरंगें उत्पन्न होती हैं। इसी प्रकार विक्षोभ से आकाश में आकाश तरंगें उत्पन्न होती हैं। इनको ही ध्वनि की तरंगें कहते हैं। वैदिक विज्ञान के हिसाब से कहें तो परमाणु जड़ है इसमें प्रज्ञा शक्ति अर्थात् Energy नहीं होती। परमात्मा ही अपनी प्राण शक्ति से परमाणुओं को गति अर्थात् Energy प्रदान करता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं Vedic Atom + Energy = Sound

God is a knowing energy

आधुनिक विज्ञान परमाणु में उर्जा को स्वाभाविक अर्थात् inherent तथा वैदिक विज्ञान परमाणु में उर्जा को स्वाभाविक नहीं नैमित्तिक Produced मानता है आधुनिक विज्ञान तथा वैदिक विज्ञान में यह बड़ा भारी विरोध है। (२) आकाश में स्थूल वायु है। आकाश के पश्चात् वायु की उत्पत्ति होती है। आकाश स्थिर जल के समान है, वायु बहती नदी के समान है। वायु में अपना स्पर्श का गुण होता है जो गतिशीलता से पैदा होता है। वायु में शब्द अर्थात् ध्वनि का गुण आकाश की उपस्थिति के कारण होता है। (३) वायु से स्थूल अग्नि होता इसमें रूप का गुण होता अर्थात् अग्नि के प्रकाश में ही वस्तु दिखाई देती है स्पर्श तथा शब्द का गुण इसमें वायु तथा आकाश के योग से होता है। (४) अग्नि से स्थूल जल होता है जल का गुण रस अर्थात् स्वाद है। इसमें रूप, स्पर्श तथा शब्द का गुण अग्नि, वायु तथा आकाश के योग से होता है। (५) जल से स्थूल पृथिवी होती है। इसमें गन्ध का गुण होता है। रस, रूप, स्पर्श तथा शब्द का गुण इसमें जल, अग्नि, वायु तथा आकाश के योग से होता है।

यह भी जानना आवश्यक है -

(१) आकाश समान क्रिया करता है अर्थात् आकाश समान प्राण से युक्त होता है। समान प्राण से तरंगें तथा तरंगों से ध्वनि उत्पन्न होती है जिसे शब्द का गुण कहते

हैं। (२) वायु व्यान क्रिया करता है। यह व्यान प्राणशर युक्त है। व्यान क्रिया से बल उत्पन्न होता है तथा बल से स्पर्श का गुण उत्पन्न होता है। इसमें ध्वनि का गुण आकाश के योग से होता है। (३) अग्नि प्राण क्रिया करता है। प्राणा से उष्णता उत्पन्न होती है। उष्णता से रूप का ज्ञान होता अर्थात् पदार्थ दिखाई देता है। (४) जल अपान क्रिया करता है। अपान क्रिया से शीतलता उत्पन्न होती है। शीतलता रस अर्थात् स्वाद का गुण उत्पन्न होता है। जल में रूप, स्पर्श तथा शब्द का गुण अग्नि वायु तथा आकाश के योग से होता है। (५) पृथिवी पदार्थ उदान क्रिया करता है। उदान क्रिया से तेज उत्पन्न होता है तथा तेज से गन्ध का गुण उत्पन्न होता है। इसमें रस, रूप, स्पर्श तथा शब्द का गुण जल, अग्नि, वायु तथा आकाश के योग से होता है।

इस प्रकार पांच प्राण होते हैं - इनमें आकाश में समान, वायु व्यान, अग्नि में प्राण, जल में अपान तथा पृथ्वी में उदान प्राण होता है।

प्राणों के स्वरूप को समझना भी आवश्यक है -

१. वह क्रिया जिससे ताप बढ़ता है उसे प्राण क्रिया कहते हैं। अग्नि प्राण क्रिया से ताप को बढ़ाता है। २. वह क्रिया जिससे शीतलता बढ़ाई उसे अपान क्रिया कहते हैं। जल शीतलता को बढ़ाता है अर्थात् ताप को कम करता है। ३. वह क्रिया जिसमें बल उत्पन्न होता है उसे व्यान क्रिया कहते हैं। वायु बल प्रदान करता है। चुम्बक लोहे को व्यान से खींचता है। Gravity गुरुत्वाकर्षण भी व्यान क्रिया है। ४. वह क्रिया जिसमें दो वस्तुओं का तापक्रम समान हो जाता है उसे समान प्राण क्रिया कहते हैं। बाल्टी के जल में दूध को ठण्डा करना। ५. वह क्रिया जिसमें ताप बना रहता उसे उदान क्रिया कहते हैं। सूर्य भूगोल के ताप को बढ़ाता है तथा जल चन्द्रमा, रात्री ताप को कम करते हैं फिर भी कोई ना तो ताप (Resultant temprature) बना रहते हैं। इसे उदान अर्थात् तेज कहते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि - अग्नि प्राण क्रिया करती है। इससे रूप दिखाई देता है। जल अपान क्रिया करता है। इसमें रस प्राप्त करते हैं। वायु व्यान क्रिया करती है। इससे स्पर्श प्राप्त करते हैं। पृथिवी उदान क्रिया करता है। इससे गन्ध प्राप्त होती है। आकाश समान क्रिया करता है। इससे शब्द उत्पन्न होता है। यह भी है कि - १. पृथ्वी पदार्थ का गुण गन्ध होता है जिसे केवल नासिका से ग्रहण करती है। २. जल का गुण रस होता है जिसे केवल रसना से ग्रहण करते हैं। ३. अग्नि का गुण रूप होता है जिसे केवल चक्षु से ग्रहण करते हैं। ४. वायु का गुण स्पर्श होता है जिसे केवल त्वचा से ग्रहण करते हैं। ५. आकाश का गुण शब्द होता है जिसे केवल श्रोत्र से ग्रहण करते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि पदार्थों के वर्गीकरण की वैदिक पद्धति पूर्ण रूप से वैज्ञानिक है।

सैद्धान्तिक चर्चा भाग-१



- पं. कमलेश कुमार अग्निहोत्री -

सत्य सनातन धर्म प्रबोधक मण्डल

पुष्कर बंगलोज, कर्णावती, गुजरात

चलभाष : ९८२४०९६०४५, ९९७९४२८०८९

एक दिन श्री जिज्ञासु जी अपने मोहल्ले में रह रहे श्री महाशय मनीषी जी के पास पहुंचे, और उनसे 'सैद्धान्तिक-चर्चा' करने लगे -

जिज्ञासु - मैंने सुना है, आप आर्यसमाजी हैं ?

मनीषी - हाँ, ईश्वर की कृपा से महर्षि दयानन्द द्वारा स्थापित आर्यसमाज के सम्पर्क में आने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

जिज्ञासु - मैं आपके स्वभाव से परिचित नहीं हूँ, अतः कहने में ...।

मनीषी - आप निःसंकोच होकर बोलिये।

जिज्ञासु - तो सुनिये ! अभी आपने बताया - ईश्वर की कृपा से आपको आर्यसमाज का सानिध्य प्राप्त हुआ, इसका अर्थ है आप ईश्वर को मानते हैं। किन्तु क्षमा कीजिये मैंने आपको मन्दिर में भगवान् के दर्शनार्थ जाते कभी नहीं देखा।

मनीषी - आप मेरे विचार सुनकर क्षुब्ध तो नहीं हो जायेंगे ? क्योंकि मैंने अनेक बार अनुभव किया है - अवैदिक मत-पन्थों से सम्बन्धित महानुभाव यथार्थ कथन को सहन नहीं कर पाते, उत्तेजित तथा अप्रसन्न हो जाते हैं।

जिज्ञासु - विश्वास कीजिये मैं दुराग्रही नहीं हूँ, आप जो कहेंगे उसे ध्यानपूर्वक सुनूंगा, और सत्य को स्वीकार कर लूंगा।

मनीषी - तो पहले आप यह बताइये - ईश्वर के सम्बन्ध में आपकी मान्यता क्या है ?

जिज्ञासु - मेरी अपनी जानकारी के अनुसार ईश्वर संसार को बनाता, अपने भक्तों का उद्धार करता * जब-जब धर्म का ह्रास होता है, तब-तब वह अवतार लेता, अर्थात् विभिन्न प्रकार के शरीर धारण कर पृथिवी पर आता और सत्पुरुषों को संरक्षण देता * उसकी मूर्ति के दर्शन और उसके नाम का कीर्तन करने से पुण्य एवं स्वर्ग की प्राप्ति होती है। इत्यादि...

मनीषी - मुझे अब पता लगा कि मेरे ईश्वर विश्वासी होने में आपको सन्देह क्यों हुआ। आप ईश्वर के यथार्थ स्वरूप को नहीं जानते। उसे शरीरधारी एकदेशी और आने-जाने वाला मानते हैं। जबकि वह निराकार, सर्वव्यापक और अचल है। लगता है, आपने वेद, उपनिषद् दर्शन आदि आर्षग्रन्थों का स्वाध्याय नहीं किया, न आर्य विद्वानों के आध्यात्मिक प्रवचन ही सुने हैं।

जिज्ञासु - वेद, उपनिषदादि का पठन तो दूर मैंने इनको देखा भी नहीं और न आर्य विद्वानों का सत्संग ही किया। मैं तो कभी-कभी तुलसीकृत रामायण अथवा (हिन्दी भाषा में लिखे) श्रीमद्भागवद्गीतादि ग्रन्थों का पाठ



कर लेता हूँ। हर पूर्णिमा को व्रत रखता और सत्यनारायण कथा पढ़ता हूँ, प्रतिदिन स्नान कर हनुमान चालीसा बोलता, फिर मन्दिर में भगवान के दर्शनार्थ जाता, शिवजी पर जल चढ़ाता, बस यही करता और इतना ही जानता हूँ। इसके अतिरिक्त मुझे कुछ भी जानकारी नहीं है।

मनीषी - यदि आप जीवनोपयोगी, हर प्रकार की यथार्थ जानकारी चाहते हैं तो आर्ष साहित्य का स्वाध्याय कीजिये, और आर्य विद्वानों के प्रवचन सुनिये। अन्यथा अविद्या अन्धकार में भटकते रहेंगे, और इस अमूल्य मानव जीवन का लाभ नहीं उठा पायेंगे। अब मैं आपको ईश्वर का वेदोक्त स्वरूप और आपकी ईश्वर सम्बन्धी मान्यताओं के दोष बता रहा हूँ।

ईश्वर अनादि, अनन्त, अचल, एकरस, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, निराकार, निर्विकार, अनुपम, चेतनादि, गुणों से युक्त है। विद्वान् उसके ब्रह्मा, विष्णु, शिव, रुद्र, महादेव, गणपति, देवी, लक्ष्मी, सरस्वती, शक्ति आदि गौण नाम बताते, और योगी-भक्तजन उसके निज नाम ओ३म् का जप करते हैं।

वह प्रकृति के बन्धन में अर्थात् जन्म-मरण के चक्र में नहीं आता, अतः उसे शरीरधारी बताना अनुचित है। उसकी कोई आकृति नहीं होती, क्योंकि आंखों से दिखाई देने वाले सभी पदार्थ नाशवान होते हैं। शास्त्रकारों ने उसको नित्य-अविनाशी माना है। ईश्वर अवतार लेता है, यह कहना अध्यात्म सम्बन्धी अनभिज्ञता का परिचय देना है।

जिज्ञासु - आपके साथ हुई अब तक की चर्चा से तो ज्ञात हुआ-मुझे ईश्वर विषयक यथार्थ ज्ञान नहीं है। आपने ब्रह्मा, विष्णु, शिव, शक्ति, देवी आदि नाम एक ईश्वर के बताये, जबकि मैं तो इनकी पृथक्-पृथक् सत्ता समझता रहा हूँ।

मनीषी - हाँ, वैदिक मान्यतानुसार ईश्वर एक और उसके नाम अनेक हैं।

जिज्ञासु - आपकी दृष्टि में मैं किस मत का अनुयायी हूँ ?

मनीषी - आप पौराणिक मत से सम्बन्धित हैं, अर्थात् पुराणोक्त मान्यताओं पर विश्वास रखते हैं।

जिज्ञासु - किन्तु मैं तो अपने आपको सनातनधर्मी मानता और बताता हूँ।

आर्ष बोध, भाग-८

१. मनुष्य शाकाहारी प्राणी है, मांस मनुष्य का स्वाभाविक भोजन नहीं है। शाकाहार से तन-मन-बुद्धि स्वस्थ और पवित्र रहते हैं। अन्न, शाक, भोजन, सब्जियों, कन्द, फल, मेवे, दूध, दहि आदि का सेवन हितकर है।
२. अपनी जीभ के स्वाद हेतु किन्हीं निरपराध प्राणियों को मारना या मरवाना घोर पाप है। स्मरण रहे ! पाप का फल दुःख कालान्तर या जन्मान्तर में अवश्य भोगना पड़ता है। अतः सुख चाहते हो तो पाप से बचो।
३. यह सर्व विदित है कि गाय, बकरी, भैंस, हाथी, घोड़े आदि शाकाहारी प्राणी कभी मांस नहीं खाते। किन्तु वर्तमान में तो अधिकांश मानव तन धारी प्राणी अण्डे मांस मछली आदि अभक्ष्य पदार्थों का सेवन करते हैं।

- पण्डित कमलेश कुमार अग्निहोत्री

मनीषी - यह आपकी भूल है सनातन तो वेद है, पुराण नहीं। आपको ज्ञात होना चाहिये सनातन का अर्थ शाश्वत, अपरिवर्तनीय होता है, अतः सनातन तो वैदिकधर्म है, पौराणिक मत नहीं।

जिज्ञासु - इस समय भारतवर्ष के अधिकांश स्त्री-पुरुष आपके कथनानुसार पुराणोक्त मान्यताओं से सम्बन्धित हैं, तो क्या उन्हें वास्तविकता का बोध नहीं है ?

मनीषी - यह तो आप स्वयं सोचिये, अभी आप ही ने तो कहा है कि मुझे ईश्वर विषयक ज्ञान नहीं है। इसीलिये मैं कहता हूँ, यथार्थ जानकारी के लिये आर्य साहित्य का स्वाध्याय अनिवार्य है। वेद विरुद्ध मान्यताओं से सम्बद्ध पुस्तकें पढ़ने से तो अन्धविश्वास को बल मिलता है, सत्य का प्रकाश नहीं हो पाता।

अब आप, वर्तमान में इस भूमण्डल पर अध्यात्म से सम्बन्धित अवैदिक मत-पन्थानुयायी विद्वानों की ईश्वर सम्बन्धी परस्पर विरोधी मान्यताओं का वर्णन सुनिये-

जो जग त्राता पालन कर्ता हर्ता विश्व विधाता है।
जग के उस स्वामी को देखो जग कैसा बतलाता है॥
कोई तो आकाश सातवें पर उसको ले जाता है।
कोई चौथे आसमान पर उसका तख्त लगाता है।
कोई गिरि कैलाश शिखर कोई वैकुण्ठ बिठाता है।
कोई क्षीर समुद्र सुलाकर पग उसके दबवाता है।
कोई कहता भक्तों पर आये संकट तब आता है।
ले अवतार धर्म की रक्षा कर अन्याय मिटाता है॥
कोई साहस कर मनमानी उसकी शक्ति दिखाता है।
कोई ब्रह्म मान अपने को खुद ईश्वर बन जाता है।
कोई कहता आत्मा ही यह परमात्मा कहलाता है।
कोई कहता है न कहीं वह यों ही जग भरमाता है॥
कोई तो होती उसकी चर्चा भी बन्द कराता है॥
कोई कह कर सब सच्चे यह मिटे विवाद चाहता है।
कोई कहता ईश विष्णु शिव गीत विष्णु के गाता है।
कोई माने यही विष्णु तो शिव का दास कहाता है।
कोई कहता 'शक्ति' विष्णु, ब्रह्मा, शिव जी की माता है।
कोई कहता शक्ति व शिव में पति-पत्नी का नाता है।
कोई कहता गुरु ही ब्रह्मा शिव हरि का पद पाता है।
कोई कहता गुरु ईश्वर से बड़ा और गति दाता है।
कोई तो बाइबल कोई कुरान पढ़े, पढ़वाता है।
कोई उसका ज्ञान कराने गीता बाँच सुनाता है।
अपने अपने निश्चय की हर मत दृढ़ धाक जमाता है।
समझाये "कमलेश" न समझे गर कोई समझाता है॥

जिज्ञासु - आपने तो मेरी आंखें खोल दीं। मैंने इस प्रकार की चर्चा पहले कभी नहीं सुनी। सचमुच करोड़ों व्यक्ति ईश्वर के सम्बन्ध में अन्यथा ही जानकारी रखते हैं। इस प्रसंग अन्तर्गत आप कृपा करके इतना और बता दीजिये कि आपका आर्यसमाज मूर्ति को मानता है अथवा नहीं ?

मनीषी - हम मूर्ति को मूर्ति मानते हैं, मानने से आपका क्या अभिप्राय है ? यह स्पष्ट कीजिये।

जिज्ञासु - मैं यह जानना चाहता हूँ कि आप लोग मूर्तिपूजा क्यों नहीं करते ? अर्थात् ईश्वर का दर्शन-पूजन करने के लिये मन्दिर में क्यों नहीं जाते ? जैसा कि मैंने कहा था - आपको कभी मन्दिर की ओर जाते हुए नहीं देखा।

मनीषी - अभी आपने ईश्वर सम्बन्धी विचार सुनकर तो यह कहा कि मेरी आंखें खोल दीं, और फिर मन्दिर में ईश्वर के दर्शन-पूजन की बात करने लगे, इसका अर्थ है, आप मेरे कथन को ठीक से नहीं समझ पाये।

मैं आपको बता चुका हूँ कि ईश्वर निराकार है, अतः उसे इन चर्म चक्षुओं से नहीं देखा जा सकता। अब रहा प्रश्न मूर्तिपूजा का, तो मूर्त का अर्थ है दिखने वाला और पूजा कहते हैं सम्मान-सत्कार व यथायोग्य उपयोग को। इस वैदिक मान्यता के अनुसार दिखाई देने वाले माता-पिता, आचार्य, विद्वानों आदि का सम्मान सत्कार और जड़ पदार्थों का यथायोग्य उपयोग हर आर्यसमाजी करता है। हम कहते हैं मूर्तिपूजा विधिवत् होनी चाहिये, हमारी दृष्टि में किसी मूर्ति अर्थात् दृश्यमान पदार्थ का दुरुपयोग और माता-पितादि का अपमान करना पाप है।

जिज्ञासु - मैंने मूर्तिपूजा की यह परिभाषा भी आज पहली बार ही सुनी है, लगता है हम लोग बहुत अन्धकार में हैं। आप पूजा शब्द का अर्थ थोड़ा और स्पष्ट कीजिये।

मनीषी - माता-पिता, आचार्य, अतिथि, विद्वानों आदि की सेवा-सुश्रुषा करना उनके सदुपदेशों और उचित आदेशों को आचरण से स्वीकारना उनकी पूजा है। भ्रमण, व्यायाम, प्राणायाम आदि के लिये वायु का * भोजन, तपन, हवन आदि के लिये अग्नि का * स्नान, पान, फसल आदि के लिये जल का * भवन, सड़क, पुल आदि के लिये पत्थरों का * आभूषण, पात्र, ओषधि आदि के लिये सोने-चाँदी आदि का * शीतकाल में धूप और प्रकाश, ऊर्जा आदि के लिये सूर्य का * कृषि, उद्योग, आवास आदि के लिये भूमि का, (एवं अन्य उन सभी पदार्थों का जो हमारे लोक-परलोक की सिद्धि में सहायक हैं) यथायोग्य उपयोग करना जड़ पूजा कहलाती है। जड़-चेतन की दृष्टि से मूर्तिपूजा का यही उचित और शास्त्रोक्त प्रकार है, इसे आर्यसमाज मानवमात्र के लिये अनिवार्य मानता है।

जिज्ञासु - हम तो ईश्वर की मूर्ति के सामने दीपक, अगरबत्ती जलाने, मिष्ठान, पुष्प, पैसे रखने, घण्टे-घड़ियाल बजाने आदि को पूजा मानते हैं।

मनीषी - जब ईश्वर की कोई आकृति है ही नहीं तो उसकी मूर्ति कैसे बनेगी ? आप इतना तो विचार कीजिये। और फिर जड़ के साथ चेतन का-सा व्यवहार करना कौनसी बुद्धिमानी है ? आप ईमानदारी से बताइये- क्या मूर्ति मिष्ठानादि खाती है ? क्या दीपक की ज्योति देखती और अगरबत्ती, पुष्पादि की गन्ध लेती है ? इसी प्रकार से क्या घण्टे-घड़ियाल की ध्वनि सुनती है ? नहीं, तो फिर ये सब क्यों किया जाता है ? आपको ज्ञात होना चाहिये बुद्धि के विपरीत कार्य करने वाले व्यक्ति कभी ईश्वर की कृपा के पात्र नहीं हो सकते।

जिज्ञासु - देखिये ! यह तो श्रद्धा और भावना पर आधारित विश्वास है। उस

ईश्वर का स्मरण करने के लिये हम मूर्ति को सुलभ माध्यम और सुगम साधन मानते हैं वैसे आपके कथनानुसार सर्वव्यापक ईश्वर मूर्ति में विद्यमान रहता ही है।

मनीषी - आप अन्धविश्वास को श्रद्धा क्यों बता रहे हैं ? श्रद्धा का सम्बन्ध तो सत्य के साथ होता है। आपने दर्शनशास्त्र नहीं पढ़े इसलिये आप यह नहीं जानते कि हमारे मान लेने मात्र से किसी वस्तु के स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं हुआ करता। जैसे कि नमक में मिश्री की भावना करके उससे मिठास प्राप्त नहीं किया जा सकता। यह सत्य है कि मूर्ति में ईश्वर व्यापक है किन्तु ध्यान दीजिये- मूर्ति ईश्वर नहीं है। ईश्वर तो आप में और मुझ में भी व्यापक है, परन्तु हम ईश्वर नहीं हैं। इस दीवार और कुर्सी में ईश्वर व्यापक है, फिर आप इन्हें ईश्वर क्यों नहीं मानते ? आपने मानव निर्मित किसी कल्पित आकृति को सुगम साधन माना है। क्या आप ईश्वर द्वारा रचित इस सृष्टि के विभिन्न पदार्थों और प्राणियों को देखकर उस ईश्वर का स्मरण नहीं कर सकते ? अब यह बताइये आप ईश्वर का स्मरण क्यों करते हैं ?

जिज्ञासु - अपना लोक और परलोक सुधारने के लिये हम श्रद्धा से बार-बार उसका नाम रटते हैं हमने। अपने आचार्यों से सुना और ग्रन्थों में पढ़ा है, वह भक्तों की मनोकामनाएं पूर्ण करता है।

मनीषी - शास्त्रकारों ने तो ईश्वर के मुख्य नाम ओ३म् का जप करने की सम्मति दी है, अन्य किसी नाम को रटना आवश्यक नहीं बताया, और जप के साथ तदनुसार भावना भी अनिवार्य मानी है। उनके कथनानुसार ओ३म् का जप करने वालों को रक्षण-पालन आदि गुणों से युक्त होना चाहिये, क्योंकि ओ३म् के ये अर्थ हैं। रहा प्रश्न भगवान् के भक्त होने का, तो भक्ति शब्द की वैदिक परिभाषा है - आज्ञा का पालन। अतः जो ईश्वर की आज्ञाओं का पालन करते वे ही ईश्वर के भक्त माने जाते हैं, केवल किसी नाम को रटने मात्र से कोई ईश्वर भक्त नहीं हो जाता।

जिज्ञासु - आपका तो हर कथन विचित्र सा लगता है, आप जपने और रटने में अन्तर मानते हैं। भक्ति शब्द की ऐसी व्याख्या भी मैंने पहले नहीं सुनी। हमें तो यह बताया गया है कि ईश्वर के अवतार श्री राम, श्री कृष्ण आदि का नाम बार-बार रटना ईश्वर भक्ति है, और हम यही करते हैं। आप कहते हैं कि ईश्वर की आज्ञाओं का पालन करना ईश्वर की भक्ति है। तो मैं यह जानना चाहता हूँ - हम मनुष्यों के लिये ईश्वर की क्या आज्ञाएँ हैं ? कृपया बताइये।

मनीषी - जब मैं आपको कह चुका हूँ कि सर्वव्यापक ईश्वर का अवतार नहीं हुआ करता। फिर भी आप मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम और योगेश्वर श्री कृष्ण को ईश्वर का अवतार बता रहे हैं। ये ईश्वर के अवतार नहीं, अपितु परम आस्तिक, अनन्य ईश्वर भक्त थे। इन ऐतिहासिक महापुरुषों के बताये मार्ग पर हमें चलना चाहिये। इनका नाम रटने मात्र से तो कोई लाभ नहीं होता। ये मानव मात्र के लिये आदर्श हैं, इनके जीवन से प्रेरणाएँ प्राप्त करना समझदारी, और इन्हें ईश्वर मानना तथा बताना नासमझी है। क्योंकि आप में पौराणिक संस्कार कूट-कूट कर भरे हुए हैं अतः वास्तविकता को शीघ्र नहीं समझ पायेंगे, मुझे यह ज्ञात होते हुए भी मैं आपको बता रहा हूँ कि हम मनुष्यों के लिये ईश्वर की आज्ञायें

क्या हैं ? इसलिये कि आप जानना चाहते हैं तो सुनिये-

हम अपने आश्रम और वर्ण से सम्बन्धित सभी कर्तव्य, निष्ठापूर्वक विधिवत् निभावें * सबको मित्र की दृष्टि से देखें * धर्मात्मा-परोपकारी बनें, अन्याय न सहें * विषयासक्ति से बचें * मोक्ष की प्राप्ति के लिये सदैव यत्नशील रहें, अर्थात् योगपथ पर चलें * किसी भी प्रकार के मादक द्रव्य एवं अभक्ष्य पदार्थ का सेवन न करें * मानव तन के महत्व को समझें * विश्व को आर्य-श्रेष्ठ बनावें, आदि आदि....।

जिज्ञासु - यह सैद्धान्तिक-चर्चा मेरे मन में विशेष प्रकार की हलचल पैदा कर रही है। मैं ऐसा अनुभव करने लगा हूँ, मेरा जीवन अन्धकार में बीत रहा है। आपके द्वारा दिये जा रहे मेरे प्रश्नों के उत्तर अनेक नये प्रश्न उत्पन्न कर देते हैं। आपकी वैदिक मान्यताओं ने मेरे पौराणिक विश्वास की जड़ें हिला दी हैं।

मुझे तो अब तक यह मालूम नहीं था कि ईश्वर भक्त के लिये बीड़ी, तम्बाकू, सिगरेट, गाँजा, भाँग, शराब, अण्डे, मछली, मांस आदि का सेवन वर्जित है। यद्यपि हम वैष्णव मतानुयायी अभक्ष्य पदार्थों से दूर रहते हैं, तथापि अन्य जो व्यक्ति इनका उपयोग करते और ईश्वर का नाम लेते, उन्हें हम ईश्वर भक्त मानते हैं।

हमारे शैव मतानुयायी बन्धु अपने भगवान् शिव की मूर्ति पर भाँग चढ़ाते और अपने आपको ईश्वर भक्त समझते हैं। आप कहते हैं प्राणियों को मित्रभाव से देखना ईश्वर की भक्ति है, किन्तु हमारे शाक्तमतानुयायी बन्धु अपनी आराध्य देवी शक्ति, महाकाली आदि की मूर्ति के समक्ष निरपराध प्राणियों की गर्दन काटते और भैरव आदि की मूर्तियों को शराब पिलाते तथा हम वैष्णव मतानुयायी बीड़ी, तम्बाकू, सिगरेट, भाँग, गाँजा, आदि का सेवन करते हुए भी अपने आपको ईश्वर भक्त मानते हैं।

मनीषी - मूर्तिपूजक क्या-क्या करते हैं, यह स्वयं आपने ही बता दिया, यदि इस प्रकार से मैं कहता तो शायद आपको बुरा लगता। आप सत्य मानिये आर्यसमाज मन्दिर और मूर्ति का विरोधी नहीं है। हम तो मूर्ति के नाम पर फैल रहे अन्धविश्वास और हो रहे अनर्थों को अनुचित मानते हैं। मूर्ति तो शिल्प कला का एक अंग है। हमें अपने महापुरुषों की मूर्तियाँ सार्वजनिक स्थानों पर लगवानी चाहिये, इसमें कोई आपत्ति नहीं है। आप आर्यसमाज का इतिहास पढ़िये, तो आपको ज्ञात होगा, अनेक आर्यवीरों ने मन्दिरों और मूर्तियों की रक्षा के लिये अपने प्राणों की बलि दी है।

हम चाहते हैं मन्दिरों का उपयोग धार्मिक, आध्यात्मिक सत्संगों, एवं विद्या प्राप्ति के लिये हो। वहाँ अष्टांगयोग का प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की जावे। केवल घण्टे-घड़ियाल बजाने से कोई लाभ नहीं है।

जिज्ञासु - आपकी मान्यता मुझे बुद्धिसंगत प्रतीत होती है। आपने मेरी यह भ्रान्ति दूर कर दी कि आर्यसमाज मन्दिर-मूर्ति को नहीं मानता, किन्तु आप लोग श्री राम, श्री कृष्ण को भगवान् नहीं मानते इसका कारण समझ में नहीं आ रहा।

मनीषी - यह आपको किसने कह दिया कि आर्यसमाज श्री राम, श्री कृष्ण को भगवान् नहीं मानता, आप विश्वास कीजिये हम इन महापुरुषों को भगवान् मानते हैं - हाँ, ईश्वर नहीं मानते।

जिज्ञासु - आप यह विचित्र बात कह रहे हैं कि श्री राम, श्री कृष्ण भगवान् तो हैं, किन्तु ईश्वर नहीं, इसका क्या अर्थ है ?

मनीषी - आपका स्वाध्याय कम है, और आर्ष ग्रन्थ तो आपने देखे भी नहीं। अतः आप भगवान् शब्द के अर्थ से परिचित नहीं हैं। शायद आपने कभी यह स्मृति पचन नहीं सुना, पढ़ा होगा कि - **ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशसः श्रियः। ज्ञान वैराग्य यौश्चैव षण्णां भग इतीरणा।**

जिज्ञासु - आप हिन्दी भाषा में समझाइये। मुझे संस्कृत भाषा नहीं आती।

मनीषी - मैं आपको इस श्लोक का अर्थ सुनाता, परन्तु आपने मुझे आगे बोलने ही नहीं दिया और बीच में बात काट दी। सुनो ! जो सर्व ऐश्वर्य, धर्म यश, श्री (शोभा=लक्ष्मी) ज्ञान एवं वैराग्य से युक्त होते, वे भगवान् कहलाते हैं। इस शास्त्रोक्त मान्यता के अनुसार भगवान् अनेक हो सकते हैं, जबकि ईश्वर केवल एक है, वैसे गौण नामों की दृष्टि से विद्वान् ईश्वर को भी भगवान् कहते हैं।

मैंने आपको बता दिया कि ईश्वर की कोई आकृति (शक्ल) नहीं होती, इसलिये कि शरीरधारी एकदेशी, नाशवान होता है, और ईश्वर सर्वव्यापक अविनाशी है। अभी तक आपके मस्तिष्क ने ईश्वर सम्बन्धी इस वैदिक विचार को स्वीकार नहीं किया। आप घूम फिर कर वहीं आ जाते हैं, कृपया सत्य को समझने का प्रयास कीजिये।

जिज्ञासु - आप ठीक कह रहे हैं, मेरे पौराणिक संस्कार बहुत गहरे हैं, इसलिये वैदिक मान्यताओं को समझने में कठिनाई होती है, किन्तु आपके साथ हो रही इस **सैद्धान्तिक-चर्चा** से मुझे यह विश्वास होने लगा है कि मैं सत्य के समीप अवश्य पहुँच जाऊँगा।

आपके साथ हुई अब तक की चर्चा से मैंने इतना तो जान लिया कि आर्यसमाज ईश्वर, मन्दिर, मूर्ति, भगवान् श्री राम, श्री कृष्ण को किस प्रकार से मानता है, किन्तु आप लोग मूर्ति के बिना ईश्वर का स्मरण, भजन-पूजन और ध्यान कैसे करते हैं ? मैं यह नहीं समझ पाया।

मनीषी - आपको अभी बहुत समझना है, यदि आप अपने पूर्व कहे अनुसार सत्य को स्वीकारने के लिये समुद्यत रहेंगे तो निश्चय ही वास्तविक ज्ञान प्राप्त कर लेंगे। आप यह जानना चाहते हैं कि आर्यजन मूर्ति के बिना ईश्वर का स्मरण, भजन, पूजन और ध्यान कैसे करते हैं। तो सुनिये-

ऋषि-मुनियों के कथनानुसार प्रत्येक व्यक्ति को ईश्वर की स्तुति, उपासना और ईश्वर से प्रार्थना अवश्य करनी चाहिये। स्मरण, भजन, पूजन, ध्यान के सम्बन्ध में हमारा मानना यह है कि- ईश्वर द्वारा रचित जड़-जंगम सृष्टि को देखकर उसका **स्मरण** * उसके गुणों का गान करना उसका भजन * उसके आदेशों का पालन करना उसका **पूजन** और अपने मन को सांसारिक विषयों से विरक्त करना उसका **ध्यान** कहलाता है। इसके लिये किसी मूर्ति की कोई आवश्यकता नहीं होती।

जो व्यक्ति (पूर्व बताये) ईश्वर के आदेशों को नहीं मानते वे ईश्वर का अपमान करते हैं, उसकी पूजा नहीं। वैदिक परम्परा में स्तुति, प्रार्थना, उपासना का विधान है। ये तथाकथित पूजा-पाठ, संकीर्तन आदि तो अवैदिक मत-पन्थों ने सिखाये हैं।

जिज्ञासु - मन में सांसारिक विषयों के विचार न आने को आपने ध्यान माना है, किन्तु हम तो ध्यान के लिये मूर्ति-चित्र आदि का आश्रय लेते हैं।

मनीषी - आप लोग यह अज्ञानतावश करते हैं, आपको ज्ञात होना चाहिये आकृति का दर्शन होता है, **ध्यान** नहीं। आप स्वयं कहते हैं कि आपने शास्त्र नहीं पढ़े, तो फिर आपको शास्त्रोक्त ज्ञान होने का प्रश्न ही नहीं है। आप यह भी जान लें कि धर्म-अध्यात्म आदि के नाम पर लिखी हर पुस्तक आर्षकोटि की नहीं हुआ करती।

जिज्ञासु - आप जिन्हें आर्ष ग्रन्थ मानते हैं, उनके नाम बताने की कृपा कीजिये।

मनीषी - ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, ईशावास्योपनिषद्, केनोपनिषद्, कठोपनिषद्, प्रश्नोपनिषद्, मुण्डकोपनिषद्, माण्डुक्योपनिषद्, तैत्तिरीयोपनिषद्, ऐतरेयोपनिषद्, छान्दोग्योपनिषद्, वृहदारण्यकोपनिषद्, श्वेताश्वरोपनिषद्, सांख्यदर्शन, योगदर्शन, न्यायदर्शन, वेदान्तदर्शन, वैशेषिकदर्शन, मीमांसादर्शन इनके अतिरिक्त प्रक्षिप्त भाग छोड़ कर मनुस्मृति, श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, महाभारत आदि-आदि आर्ष ग्रन्थ माने जाते हैं, किन्तु इनमें कहीं वेद विरुद्ध उल्लेख हो तो वह स्वीकार्य नहीं होता। स्वतः प्रमाण तो केवल वेद ही है। इसके अतिरिक्त अन्य सभी ग्रन्थों को आर्य विद्वान् परतः प्रमाण बताते हैं।

आप वैदिक साहित्य पढ़िये-सुनिये, इसमें ईश्वर को सर्वव्यापक बताया और ईश्वरोपासक के लिये **अष्टांगयोग** आवश्यक माना है। तथाकथित भजन-संकीर्तन, जागरण, पूजा-पाठ, तीर्थस्नान और किसी मूर्ति-चित्रादि के दर्शन करने का कहीं उल्लेख नहीं है।

जिज्ञासु - अष्टांगयोग किसे कहते हैं ? मैंने यह नाम भी आज ही सुना है। हमारे विद्वान्-ज्ञानयोग, भक्तियोग, लययोग, कर्मयोग, ध्यानयोग, राजयोग, हठयोग, आदि के सम्बन्ध में कभी-कभी कुछ बताते रहते हैं, किन्तु **अष्टांगयोग** की चर्चा तो नहीं करते।

मनीषी - मैंने आपको आर्षग्रन्थों के जो नाम बताये उन में **महर्षि पतंजलि** जी महाराज का लिखा **योगदर्शन अष्टांगयोग** की विस्तृत जानकारी देता है। मन को सांसारिक विषयों से रोकने का नाम योग और इसके **आठ अंग** होते हैं, इसलिये इसे **अष्टांगयोग** कहा जाता है। आप पहले योगांगों के नाम सुनिये - **यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि**। अब इन अंगों से सम्बन्धित संक्षिप्त जानकारी प्राप्त कीजिये।

(१) किसी के प्रति बैर भावना न रखना, सत्य का आचरण करना, किसी की वस्तु पर न ललचाना, आश्रम मर्यादा को ध्यान में रखते हुए ब्रह्मचर्य का व्रत निभाना, सांसारिक पदार्थों के अनावश्यक संग्रह से बचना - '**यम**'

(२) तन, वस्त्र, आवास, पात्र, भोजन, व्यवहार, अन्तःकरण आदि की स्वच्छता, पवित्रता बनाये रखना, पूर्ण परिश्रम-पुरुषार्थ के परिणाम पर सन्तुष्ट होना, मान-अपमान, सर्दी-गर्मी, भूख-प्यास, हानि-लाभ, अनुकूलता-प्रतिकूलता आदि को सहना, आर्षग्रन्थों का पठन, ईश्वर के मुख्य नाम **ओ३म्** का जप, आत्मनिरीक्षण और ईश्वर के प्रति सर्वात्मना समर्पित भाव - '**नियम**'

(३) सुखपूर्वक स्थिर होकर बैठना - '**आसन**'। (४) श्वास-प्रश्वास को

नियन्त्रित करना - 'प्राणायाम'। (५) इन्द्रियों को विषयों से हटाना 'प्रत्याहार'। (६) मन की एकाग्रता - 'धारणा' (७) सांसारिक विषयों के प्रति आसक्त न होना - 'ध्यान' और (८) जन्म जन्मान्तरों के संचित अशुभ संस्कारों को जलाना 'समाधि', ये योग के आठ अंग हैं।

हर ईश्वरोपासक इन अंगों के परिपालन का निरन्तर अभ्यास करे, यह बहुत आवश्यक है, अन्यथा साधना में सफलता नहीं मिल सकती, हम यह मानते हैं।

जिज्ञासु - आपका ईश्वर और ईश्वर भक्ति का प्रकार हम से सर्वथा पृथक् है। हम तो ईश्वर भक्त उन्हें मानते हैं जो मन्दिर में जाकर भगवान् की मूर्ति के समक्ष हाथ जोड़े परिक्रमा लगावें, पुजारी जी से तुलसी-चरणामृत लेवें, भगवान् के नाम का संकीर्तन करें, माला फेंकें, इत्यादि...।

मनीषी - फिर चाहे वे बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू, गाँजा, भांग, शराब आदि पीते रहें, गालियाँ बकें, क्रोध करें, विषयासक्त हों, असत्य बोलें, पर स्त्री को बुरी दृष्टि से देखें, अश्लील गीत गावें, अण्डे, मछली, मांस खावें, छली-कपटी, रिश्वतखोर हों, गरीबों को सतावे, जुआ खेलें...।

जिज्ञासु - बस-बस अब आप रहने दीजिये। आपने तो मेरे मानस को झकझोर दिया। आप जो बता रहे हैं, वास्तव में ऐसा ही हो रहा है। इनमें -से कोई न कोई दोष किसी न किसी अनुपात में उन अधिकांश व्यक्तियों में पाये जाते हैं जो हमारी मान्यतानुसार अपने आपको ईश्वर भक्त मानते हैं। सर्वथा निर्दोष तो इन्हें गिने ही होते हैं।

मनीषी - तो फिर बताइये ऐसी ईश्वर भक्ति का क्या लाभ है? मुझे, यह कहते हुए विशेष कष्ट की अनुभूति हो रही है कि ऋषि-मुनियों एवं मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्री राम, योगेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण आदि पवित्रात्माओं के महान् भारतवर्ष में दुर्व्यसनी, दुराचारी, भ्रष्ट, व्यक्ति भी अपने आपको ईश्वर भक्त मान रहे हैं। हमारे विश्वास के अनुसार जब तक मनुष्य, ईश्वर के यथार्थ स्वरूप को नहीं समझ लें और ईश्वरोपासना के वैदिक प्रकार को विधिवत् न अपना लें तब तक अपना आध्यात्मिक विकास नहीं कर सकते।

जिज्ञासु - आप लोग हमारी तरह से ईश्वर भक्ति के लिये भजन, संकीर्तन, मूर्ति-दर्शन, पूजा-पाठ आदि को आवश्यक नहीं समझते तो फिर ईश्वर की आराधना कैसे करते हैं? अर्थात् आपके कथनानुसार ईश्वरोपासना वाला आपका वैदिक प्रकार कौनसा है? कृपया यह बताइये।

मनीषी - मैं यह कह चुका कि वैदिक परम्परा में ईश्वर की स्तुति, उपासना और ईश्वर से प्रार्थना करने का विधान है। भक्ति शब्द की शास्त्रोक्त व्याख्या मैंने आपको सुना दी अब आप और क्या जानना चाहते हैं?

जिज्ञासु - मुझे ईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना का प्रकार और लाभ बताइये।

मनीषी - अनन्य श्रद्धा-भक्ति भावना से ईश्वर के गुणों का गान करना ईश्वर की स्तुति है। जैसे कि हे ईश्वर ! आपने हम जीवों के कल्याणार्थ इस जगत् की रचना की। सूर्य-चन्द्र, नक्षत्र, पृथ्वी, समुद्र-नदियाँ, झरने, सरोवर, पहाड़, वन-उपवन, वृक्ष-लताएँ, पुष्प-फल, अन्न औषधियाँ और भाँति-भाँति के पशु-पक्षी आदि आपकी महानता का परिचय दे रहे हैं। आप सर्वव्यापक, सर्वान्तर्ग्रामी, सर्वरक्षक, सर्वज्ञ, दयालु, न्यायकारी, दुःखहर्ता, आनन्द प्रदाता हैं इत्यादि....।

प्रार्थना - हे ईश्वर ! आप कृपा करके हमें शान्ति, साहस, पवित्रता, सुबुद्धि प्रदान कीजिये, इत्यादि....।

उपासना - सांसारिक विषयों से अपने मन को हटा कर ईश्वर में लगाना, अपने आप में ईश्वर को व्यापक मानना अर्थात् अपने आपको ईश्वर के अत्यन्त निकट अनुभव करना इत्यादि..।

लाभ - स्तुति करने से - ईश्वर के प्रति हमारी श्रद्धा-भक्ति भावना, प्रीति बनी रहती, और इनमें निरन्तर वृद्धि होती है। प्रार्थना करने से - प्राप्त उपलब्धियों के प्रति हमारे हृदय में अभिमान का अंकुर उत्पन्न नहीं हो पाता। अर्थात् हम अपनी हर सफलता, उन्नति आदि में ईश्वर की कृपा का योगदान मानकर अभिमान रूपी शत्रु से बच जाते हैं। उपासना करने से ईश्वर के न्याय, दया, उपकार, आनन्दादिगुणों की हमें प्राप्ति हो जाती है।। इत्यादि...।

जो व्यक्ति 'अष्टांगयोग' के अनुसार नियमित रूप से विधिवत् ईश्वरोपासना करते हैं, वे अपने जीवन का फल पाते हैं। यथार्थ जानकारी के अभाव में आज अधिकांश मनुष्यों को उनकी श्रद्धा भक्ति-भावना का यथोचित लाभ प्राप्त नहीं हो पा रहा। यह बात मैं आपको बहुत सोच-विचार करके कह रहा हूँ।

वेद विरुद्ध मत-पन्थों के जाल में जकड़े हुए वर्तमान के अध्यात्मप्रेमी महानुभावों को यदि वैदिक सन्ध्योपासना के विधि-विधान का ठीक-ठीक ज्ञान हो जाये तो वे निश्चय ही अपनी आत्मिकोन्नति कर सकते हैं। आपके बताये अनुसार आप तुलसीकृत रामायण का पाठ करते हैं, तो आपको यह ज्ञात अवश्य होगा कि श्री राम-लक्ष्मणादि ने भी सन्ध्योपासना की थी।

निसी प्रबेस मुनि आय दीन्हा। सबहीं संध्याबंद कीन्हा।।

विगत दिवसु गुरु आयतु पाई। संध्या करन चले दोड भाई।।

पुरजन करि जोहारु घर आए। रघुबर संध्या करन सिधाए।।

इससे प्रमाणित होता है हमारे पूर्वज सन्ध्या करते थे यह तो आप अच्छी तरह जानते ही होंगे।

जिज्ञासु - मैंने रामायण जी में यह अनेक बार पढ़ा, किन्तु ध्यान नहीं दिया। और फिर मैं सन्ध्या का अर्थ भी नहीं जानता। हमारे मस्तिष्क में तो जैसा कि मैंने आपको बताया, ईश्वर भक्ति के नाम पर पूजा-पाठ, दर्शन-संकीर्तन आदि भरा है। आप कृपा करके सन्ध्या के सम्बन्ध में मुझे जानकारी और दे दीजिये।

मनीषी - (धड़ी की ओर देखकर) आज अपने यहाँ के आर्यसमाज मन्दिर में अभी थोड़ी देर के बाद आर्यजगत् के महान् विद्वान् वीतराग संन्यासी श्री पूज्यपाद स्वामी सुगमानन्द जी महाराज का आध्यात्मिक प्रवचन होगा, मुझे वहाँ सत्संग में जाना है, अच्छा हो आप भी मेरे साथ चलें।

जिज्ञासु - यह तो मेरा सौभाग्य है कि मैं आज पहली बार आर्यसमाज मन्दिर में आर्य संन्यासी जी का प्रवचन सुनूँगा। आपसे हुई सैद्धान्तिक-चर्चा ने मेरी जिज्ञासा और बढ़ा दी, अब मैं आप से बहुत जानना चाहूँगा। आज आपने मुझे अपना अमूल्य समय दिया इसके लिये मैं आपका हृदय से आभारी हूँ।

मनीषी - आप कल इसी समय पुनः पधारें आपका स्वागत है। मैं अपनी योग्यतानुसार आपको सत्य सनातन वैदिक मान्यताओं से सम्बन्धित जानकारी देने का पूर्ण प्रयास करूँगा।

शेष चर्चा आगामी अंक में....

वैदिक विवाह संक्षिप्त विवेचन



मंगलसिंह अनाकर

ब्यावर, जनपद : अजमेर (राज.)

चलभाष : ९४६०५४६५७५

भारतीय मानव समाज का आधार वैदिक संस्कृति एवं संस्कार है। हमारे प्राचीन ऋषि मुनियों ने वेदाध्ययन (परमात्मा प्रदत्त ज्ञान) कर संसार सागर से सुख पूर्वक पार उतरने के विधी विधान हमें प्रदान किये। सोलह संस्कारों में विवाह संस्कार को अत्यन्त महत्वपूर्ण बताया। इसमें वेद मंत्रों के पाठ के साथ परमात्मा, अग्नि व सगे सम्बन्धियों की साक्षी में फेरे, सप्तपदी आदि प्रक्रियाओं के साथ विवाह करने का विधान है। जिसे हिन्दू मान्यतानुसार जन्म-जन्मान्तों का अटूट सम्बन्ध कहा है। संस्कारों में भले ही इसका क्रम स्थान-तेरहवां है। परन्तु यह सभी संस्कारों का उद्भव स्थल है। सभी संस्कारों में यह अत्यन्त लम्बा, अनेक प्रक्रियों के कारण जटील, समय व श्रम साध्य लगते हुए भी अत्यावश्यक श्रेष्ठ मानव निर्माण का साधन व सर्वशिक्षा प्रदाता है। वस्तुतः वर्तमान काल में पुरोहित से यजमान तक और वर पक्ष से लेकर सभा मण्डप में उपस्थित सभासद (स्त्री/पुरुष) भी धीर गम्भीर नहीं होते हैं। चाहे डी जे पर नाच गाने में सारा समय खप जाये। चाहे तथाकथित शुभ मुहूर्त भी निकल जाए। पर विवाह संस्कार मिनटों में अधकचरा विधी विहीन सम्पन्न हो जाए उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता। फर्क तो पड़ता है सम्पूर्ण मानव समाज व मानवता पर। तदफल समाज में नानाविध अवांछित गतिविधियां जन्म ले लेती हैं। लेती जा रही हैं। वस्तुतः उच्च धार्मिक भावना का अन्तिम दुर्ग स्त्री-हृदय ही होता है पर जब विवाह में वर-वधू का चयन गुण, कर्म, स्वभाव आधारित नहीं होता है तो यह दुर्ग भी ढ़ह जाता है तथा गुप्त व्यभिचार से स्त्रियों के दूषित होने पर सन्तान भी वर्णशंकर उत्पन्न होकर कदाचार फैल जाता है। रही सही कसर नए नियम ने कर दी है। सम्प्रति उचित ज्ञान, सद शिक्षा व संस्कारों के अभाव में मानव मन विकार युक्त हो गया है। होता जा रहा है। चहूँ ओर निराशा, अशान्ति, असहनशीलता, आतंक एवं व्यभिचारादि का वातावरण बन गया है। बन रहा है। सभी समाचार पत्र शर्मशार करने वाले समाचारों से रंगे पड़े होते हैं। अपवाद को छोड़कर घर परिवार स्वर्ग की अपेक्षा कलह युक्त नर्क बनते जा रहे हैं। वस्तुतः हमारे उपर मुख्यतः तीन ऋण है यथा ऋषि ऋण, देव ऋण व पितृ ऋण। ऋषियों ने हमें सद्ज्ञान व संस्कार दिये। विद्वानों व पूर्वजों ने

सामाजिक व लोक व्यवहार सिखाया तथा माता-पिता ने हमें जन्म देकर वंश वृक्ष को आगे बढ़ाने का दायित्व सौंपा। अतः इन ऋणों से उन्मूढ होने का एक मात्र साधन गृहस्थ जीवन ही है। तथा विवाह उसका माध्यम है। मेरा मानना है कि वेद के बाद यदि धार्मिक, आध्यात्मिक, सामाजिक व लोक व्यवहार का संविधान कोई है तो वह महर्षि मनु प्रणीत मनु स्मृति ही है। विस्तारभय से उसका उल्लेख संभव नहीं है। परन्तु माता के महत्व को दर्शाने वाला एक मंत्र देना आवश्यक समझता हूँ। **उपाध्यायान् दशाचार्य, आचार्याणां शतं पिता। सहस्र तु पितृन् माता, गौरवेणातिरिच्यते।।** अर्थात् दस सहायक शिक्षकों से एक अध्यापक बड़ा, सौ आचार्यों से भी पिता बड़ा, पिता से भी हजार गुना बड़ा माता का महत्व होता है। माता ही बच्चों की प्रथम गुरु होती है। वह सन्तान को सुसंस्कार देकर उनका नैतिकता सम्पन्न सर्वांगीण विकास कर सकती है। यह तभी सम्भव होगा जब मां को समुचित संस्कारों युक्त शिक्षा मिले। विवाह काल इस हेतु अनुकूल अवसर है जब वर कन्या का हृदय कोरा कागज होता है। महाकवि कालिदास भी धर्म में मां की महती भूमिका मानते हैं : **क्रियाणां खलु धर्म्याणां सत्यो मूलकारणम्।** सभी धार्मिक क्रियाओं का मूल कारण अच्छी पत्नियां ही हुआ करती हैं। विवाह हेतु अनेक शास्त्रों में निश्चित आयु निर्धारण का विधान है। वेद में पूर्ण युवावस्था में ही विवाह करने का निर्देश है। अन्यथा सन्तान के अल्पायु, रोगी, मन्दबुद्धि व विकलांग उत्पन्न

दयानन्द सेवाश्रम का शताब्दी समारोह

दिनांक ११ से १३ जनवरी २०१९

दयानन्द सेवाश्रम थांदला, जिला : झाबुआ मध्यप्रदेश का शताब्दी समारोह वर्णित तिथियों में हर्षोल्लास पूर्वक मनाया जा रहा है समस्त धर्मनिष्ठजन सादर आमंत्रित हैं।

**संस्कार
शिविर**

दिनांक १३ से १५ जनवरी २०१९

समय प्रातः ८ : ०० से ११ : ००

शाम ६ : ०० से ९ : ००

सानिध्य : आचार्य विवेक जी चैतन्य, हिमाचल प्रदेश

आयोजक : आर्य समाज सैलाना, जिला रतलाम

सम्पर्क : शेखर आर्य ९५८४२ २६५५०

सामवेद पारायण यज्ञ - १३ से १७ फरवरी २०१९ तक

आर्य समाज डोलरिया, जिला- होशंगाबाद (म. प्र.) के तत्वावधान में सामवेद पारायण यज्ञ तथा वैदिक सत्संग का आयोजन दिनांक १३ से १७ फरवरी तक किया जावेगा। इस अवसर पर समस्त धर्मनिष्ठजन सादर आमन्त्रित हैं।

आमन्त्रित विद्वान

आचार्य सोमदेव जी आर्य, वानप्रस्थ साधक आश्रम, रोजड़

श्री दिनेश जी पथिक, पंजाब

सम्पर्क : राधेश्याम सूर्यवंशी (प्रधान)

विनोद कुमार जर्मीदार (कोषाध्यक्ष), उमेश राजपूत कलमेसरा वाले

होने की प्रबल सम्भावना रहती है। कन्या के शारीरिक विकास के आधार पर कब विवाह करें, निम्न वेद मन्त्र द्रष्टव्य है। **सोमः प्रथमो विवदे गन्धर्वो विवद उत्तरः। तृतीयो अग्निष्टे पति स्तुरीयस्ते मनुष्यजाः।।** अर्थात् कन्या के देह विकास की तीन अवस्थाएं होती हैं। यथा सोम=शारीरिक विकास। गन्धर्व=सौन्दर्य निखार (ललितकला युक्त होना) व अग्नि=ऋतु काल (heat)। प्रथम ऋतु स्त्राव के तीन वर्ष बाद विवाह करने का वेदानुकूल विधान महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने बतलाया था। अर्थात् शिक्षित कन्या का युवा विद्वान (आर्ष शिक्षा प्राप्त) पुरुष के साथ विवाह करना। विवाह करना मात्र गृहस्थ जीवन नहीं है। जब तक कि उसमें केवल्य भाव विकसित न हो अथात् वर-वधू में एक दूसरे के अतिरिक्त अन्य का भाव ही न आवे। ऋषि मुनियों ने हमें सुखी गृहस्थ जीवन जीने हेतु पांच शब्द दिये। १. मृदु-मधुर व्यवहार, २. निर्मन्य-क्रोध हीनता, ३. केवली-समर्पण भावना, ४. प्रियावादिनी-मिठी वाणी ५. अनुव्रता-एक दूसरे के विचारों का ससम्मान पालन करना। मनु महाराज हमारे आदर्श पुरुष हैं। इस हेतु उनके भाव हैं :

हृदय बन रहा था सीपी सा, तुम स्वाति की बूंद बनी।

मानस शत दल झूम उठा जब तुम उसमें मकरंद बनी।।

तुमने इस सूखे पतझड़ में, भर दी हरियाली कितनी।

मैंने समझा मादकता है, तृप्ति बन गई तुम इतनी।।

वस्तुतः विवाह के लिए प्रथमतः वाग्दान (सगाई) का विधान है। वेद के अनुसार कुल (वंश), प्रज्ञा (विद्या), वित्त (आर्थिक स्थिति) तथा रूप लावण्य (वय-आयु गुण कर्म स्वभावाद)। इन चार स्थितियों से वर कन्या का सम्बन्ध निश्चित किया जाना चाहिए। इनमें से अन्तिम दो वित्त व वय को छोड़ा भी जा सकता है। पर कुल और प्रज्ञा को वंश व विद्या को नहीं छोड़ा जा सकता चाहे सन्तान आजन्म अविवाहित ही क्यों न रह जाय। प्रायः वर्तमान में इनको दृष्टि पथ में न रख कर वर की अपेक्षा घर को महत्व दिया जा रहा है। फलतः अकर्मण्यता आलस्य (आ-बिना, लस-ओज, तेज, कीर्ती) प्रमाद व शराब खोरी के कारण प्रायः बेटी को कष्टप्रद जीवन जीने को विवश होना पड़ रहा है। पूर्णतया मेरे व्यक्तिगत विचार से सब अन्धविश्वासों की जड़ या कारण अविद्या ही होती है। तदफल जन मानस का जड़ पूजा करते-करते मन मस्तिष्क भी तर्क व विवेक शक्ति से शून्य जड़ हो गया लगता है। सभी समाचार पत्र शर्मशार करने वाली खबरों से रंगे पड़े होते हैं। राष्ट्र में आज हर पर्वत से पहाड़ी तक मन्दिरों में बन्द लगभग पुलिस से पल्टन तक के संख्या बल सम भगवान विराजमान हैं जो चोरादि से स्वरक्षा करने में समर्थ नहीं हैं। तथा श्रद्धालु यात्रियों के यात्रा काल में दुर्घटना से लेकर आतंकी आक्रमण तक से रक्षा (भगवान के लिए आतंकी तो मात्र मच्छर सम तुच्छ ही होता है) तो दूर की कथा है। अपितु उनकी व श्रद्धालु यात्रियों की रक्षार्थ सरकार को पुलिस से सेना तक तैनात करने में राष्ट्र का कितना सनसाधन, समय, श्रम व धन व्यर्थ व्यय करना पड़ रहा है। यह विचारणीय विषय है। क्या इससे बचा नहीं जा सकता? उदयपुर के पूर्व महाराणा के स्मृतिशेष चाचा राणाजी श्री चत्तर सिंह

जी शब्दों में - भोपा तो डोफा हुए, गुंफा करे विश्वास। जादू मूठ असर करे तो, सेना क्यूं राखे सरकार।। समुचित सद ज्ञान के अभाव अतिरेक से राजस्थान विधान सभा में एक विधायक महोदय भूत होने की बात करते हैं। जबकि भूत नाम का कोई प्राणी, अप्राणी या योनी होती ही नहीं है। ऐसे अज्ञानी लोग हम पर राज करेंगे तो देश व राष्ट्र का क्या भला होगा? वस्तुतः विधान सभा में तो न भूत था न है और न होगा। परन्तु कुछ काल बाद उनको भी भूत लगने वाला है। यह बात विशेष रूप से उनके जानने योग्य है कि जीव के देहावसान से लेकर अन्त्येष्टि कर्म संस्कार तक शव का नाम ही प्रेत है व अन्त्येष्टि के बाद उसका नाम भूत हो जाता है। अर्थात् बीत गया, पहले था अब नहीं रहा-भूत हो गया। वैसे अब तक कई नेता भी भूत हुए घूम रहे हैं। वस्तुतः सरकारें तो कभी भूत नहीं होती परन्तु सरकार चलाने वाले अवश्य भूत हो जाते हैं। किन्तु जिसने अभाव के भाव प्रभाव (power of the poor) अर्थात् जनमानस की भावना को पूर्णतया समझ लिया है। उन नेताओं को भूत कम ही लगते हैं। वर्तमान में राष्ट्र में क्या हो रहा है। कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा भानुमति ने कुनबा जोड़ा कहावत सिद्ध हो रही है। बाल बुद्धि लब्ध खेल सा प्रतीत हो रहा है। जैसे बच्चे खेलते समय झगड़ते हुए एक दूसरे को कोसते हुए कहते हैं कि तेरा बाप मर जाए तो दूसरा कहता है कि तेरी माँ मर जाए। फिर पल भर में एक हो जाते हैं। ऐसे परस्पर धूर्विरोधी दलों का संगठित होना बाल खेल वत् ही लगता है। लगता है राजनीतिक दल न जन भावना और न संविधान का सम्मान करते प्रतीत हो रहे हैं। परमात्मा उनको सद बुद्धि दे यही प्रार्थना कर सकते हैं। वेद सम्पूर्ण ज्ञान के भण्डार हैं अतः वेदों की ओर लौटना, वेद शिक्षा पर चलना मानव मात्र के कल्याणार्थ परम आवश्यक है। मैं जन साधारण से विनम्र निवेदन करता हूँ कि हमें राष्ट्र हित में स्वच्छ छवि के नेताओं सरकारों का, प्रशासन का यथामति यथाक्ति उचित कार्यों में सहयोग करना चाहिये। कुछ स्वार्थी लोग न कानून, न प्रशासन, न सरकार को ही मानते हैं। हमें ऐसे लोगों की उपेक्षा करनी चाहिये। दुकानदार हैं तो उससे सामान न खरीदें कर्मचारी हैं तो उससे व्यवहार न करें आदि आदि। यह विकल्प रहित संकल्प है। इसमें लड़ाई झगड़े का बखेड़ा भी नहीं है। अन्त में आग्रह पूर्वक राष्ट्र हित में कर्णधारों से विनम्र निवेदन :

**दल के दल दल में मत उलझो, नेताजी अपना अभिनेतापन छोड़ो।
ला समानता कथनी करणी में अपने, राग पृथक्ता का अब मत छोड़ो।।**

मानव की मानवता को अब मत तोड़ो।

अभिव्यक्ति में अपनी राष्ट्र हित को जोड़ो।

भिष्म, विदुर, चाणक्य से नीतिज्ञ बन,

चरित्र राम, कृष्ण, दयानन्द से अपने में देखो।

ऐ मेरे नीति निष्ठ बन्धु जाग जाग ला चेतना अपने भी अवचेतन मन में।।

जन्मना जायते शुद्रः संस्कराद्ब्रिज उच्यते।

वेद पाठ्य भवेद् विप्रो ब्रह्म जानाति ब्राह्मणः।।

निर्माणों के इस पावन युग में चरित्र निर्माण भूल न जाना।

विकासों की आंधी में उपकार मातृ भूमि का भूल न जाना। ●

ज्योतिष चर्चा : सत्यार्थ प्रकाश



आचार्य दार्शन्य लोकेश, सम्पादक

श्री मोहन कृति आर्ष पत्रकम् (एकमात्र वैदिक पञ्चाङ्ग)

सी - २७६, गामा-१, ग्रेटर नॉएडा

दूरभाष : ०१२०४२७१४१०

प्रश्नकर्ता : ऋषि दयानन्द जी ने सत्यार्थप्रकाश के ११वें समुल्लास में लिखा है- “जैसे अनुलोम प्रतिलोम घूमनेवाले पृथिवी और चन्द्र के गणित से स्पष्टविदित होता है कि अमुक समय, अमुक देश, अमुक अवयव में सूर्य वा चन्द्रग्रहण होगा।”

मुझे समझना है कि यहां “अनुलोम प्रतिलोम” से ऋषि जी का क्या तात्पर्य है?

आचार्य उवाच - अनुलोम और प्रतिलोम शब्द समानार्थ होकर भी क्रियात्मक रूपेण अलग-अलग अर्थ रखते हैं। यह ऐसे ही है जैसे कि क्रिया और प्रतिक्रिया। क्रिया और प्रतिक्रिया में अंतर केवल इतना है कि प्रतिक्रिया पूर्व की क्रिया के बाद की परिणामी होने से प्रतिक्रिया है। अनुलोम अर्थात् नियमित स्वाभाविक, क्रमानुसार।

पृथ्वी की सूर्योदय से सूर्यास्त तक अनुलोम और फिर सूर्यास्त से अगले सूर्योदय तक प्रतिलोम गति कही जायेगी। प्रतिलोम परिणामी प्रतिक्रिया है। ये दोनों एक अर्थ से विपरीत अर्थ के शब्द भी हैं। सूर्योदय से सूर्यास्त तक पृथ्वी सूर्य की सापेक्ष जिस पथ और दिशा में होती है सूर्यास्त से सूर्योदय के अंतराल समय में ठीक उसके विपरीत होती है।

ऐसी ही चन्द्रमा की विमण्डल के सापेक्ष स्थिति होती है। अनुलोम, राहु विन्दु को बनाते हुए और प्रतिलोम, ठीक विपरीत दिशा में केतु बिन्दु को बनाते हुए जिस प्रकार सूर्योदय और सूर्यास्त केवल परिणामी घटनाएं हैं उसी प्रकार से दोनों ही ग्रहण (सूर्य व चंद्र ग्रहण) भी खगोलीय सन्दर्भ की परिणामी घटनाएं हैं।

स्वामी जी ने जो अनुलोम और प्रतिलोम, दो शब्द पृथ्वी और चंद्र भ्रमण के लिए प्रयुक्त किए हैं वे, पारम्परिक खगोल शब्दावलि के न होकर भी खगोलिकी के सन्दर्भ से तो सम्यक् वाक्य प्रयोग ही हैं।

अधिक स्पष्टता के लिए मैं दोलन शब्द का उल्लेख करना चाहूंगा। दोलन में पिण्ड के पथ और दिशा नहीं बदलते जबकि व्यवहार, अनुलोम प्रतिलोम जैसा ही बना रहता है। सारे परिप्रेक्ष्य में Revolution और Rotation अनुलोम प्रतिलोम के ठीक-ठीक अनुवाद न सही किन्तु पर्याय जैसे तो हैं। कुछ ऐसे ही जैसे कि मार्तण्ड (मार्तण्ड प्रखर) और अरुण (अरुणोदय)। धन्यवाद।

प्रश्नकर्ता : “जो तुम ग्रहों का फल मानो तो इसका उत्तर देओ कि जिस क्षण में एक मनुष्य का जन्म होता है जिसको तुम ‘ध्रुवाँत्रुटि’ मानकर जन्मपत्र बनाते हो उसी समय में भूगोल पर दूसरे का जन्म होता है वा नहीं?”

सत्यार्थप्रकाश के ११वें समुल्लास में फलित ज्योतिष के खण्डन करते हुए महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने “ध्रुवाँत्रुटि” शब्द का प्रयोग किया है। कृपया बताएं कि ज्योतिष विषयक इस शब्द का अर्थ क्या है?

आचार्य उवाच - ज्योतिषियों का मानना है कि मनुष्य जन्मकाल

सूक्ष्मातिशूक्ष्म रूप अर्थात् “त्रुटि” आधार तक सुनिश्चित (ध्रुव) है। महर्षि ने इस पर शंका की है क्योंकि ऐसा गणितीय रूप से संज्ञान ले पाना सम्भव ही नहीं है। यहां स्त्रीलिंग संज्ञा शब्द ‘त्रुटि’ के विशेषण ‘ध्रुव’ शब्द को ‘ध्रुवा’ करके लिखा गया है जो कि सही है।

काल के स्थूल और सूक्ष्म नाम से दो गणना भेद हैं।

सूक्ष्म काल की लघुत्तम इकाई ‘त्रुटि’ और महत्तम इकाई ‘प्राण’ होती है जबकि स्थूल जो व्यवहारिक काल भी कहा जाता है, की लघुत्तम इकाई ‘प्राण’ और महत्तम इकाई ‘ब्रह्मायु’ होती है।

जन्म काल निर्धारण के ३ आधार माने गए हैं -

१. आधानं जन्म (क्षेत्रस्पष्ट में बीज स्पष्ट संयोग),
२. भूपतनं जन्म (जातक का मातृ शरीर से स्पष्टतया विलग होजाना) और
३. रोदनं जन्म (अर्थात् जातक का रोना)।

कुल मिलकर अब तक के सभी ज्योतिषी इसको निर्धारित और गणित सम्मत सिद्ध नहीं कर पाए हैं कि वस्तुतः जन्म काल क्या है और यह भी कि उसका ठीक से संज्ञान ले पाना संभव भी है? विदित हो कि एक ‘त्रुटि’ को आज के १ सेकिण्ड का ३२४००००वां भाग कहा गया है।

प्राणादिः कथितो मूर्तस्त्रुट्याद्योऽसंज्ञकः षड्भिः प्राणैः विनाडी स्यात्तत्त्वष्ट्या नाडिकास्मृता। (देखें सूर्य सिद्धान्त १/११)

६० त्रुटि = १ रेणु, ६० रेणु = १ लव, ६० लव = १ लीक्षक और ६० लीक्षक = १ प्राण। इस प्रकार १ प्राण ४ सेकण्ड या १० विपल के बराबर होता है।

मैंने अजमेर ज्योतिष प्रशिक्षण शिविर में इस काल व्यवस्था को सविस्तार पढ़ाया था। आशा है प्रतिभागी विद्वानों को स्मरण होगा।

प्रश्नकर्ता : आपके अनुसार अभिजित नक्षत्र मानकर २८ नक्षत्र हैं परंतु स्वामी दयानन्द सरस्वती ने संस्कार विधि के नामकरण संस्कार में २८ नक्षत्रों के २७ देवता लिखे हैं क्या स्वामी दयानन्द २८वां अभिजित नक्षत्र भूल गए या फिर २८वें नक्षत्र की जानकारी नहीं थी?

आचार्य उवाच - महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने वस्तुतः वेदांग ‘ज्योतिष’ को नकारा नहीं है किन्तु साथ ही इस क्षेत्र में कोई कार्य भी नहीं किया है। हमें उनको एक ज्योतिर्विद के रूप में नहीं लेना चाहिए। मेरे अपने विचार से मूलतः वे कुरीति उन्मूलक, वेदोद्धारक और इसी परिप्रेक्ष्य के समाज सुधारक थे। उन्होंने जन्म पत्री को शोक पत्री कहकर फलित शास्त्र का जिसको अज्ञानवश लोग ज्योतिष भी कहते हैं, का निषेध जरूर दर्शाया है लेकिन ज्योतिष का (स. प्र. तृतीय समुल्लास) न केवल समर्थन किया है अपितु

विद्यार्थी जीवन में ज्योतिष का सूर्यसिद्धांत आदि के अध्ययन पूर्वक पूरा ज्ञानार्जन कर लेने की प्रेरणा भी दी है। ये उन्होंने फलित की ग्रह पूजा और ग्रहों के ऐच्छिक फल दे पाने के सृष्टिक्रम विरुद्ध सिद्धांत के अनुसार ठीक ही किया है। अति अर्वाचीन होने के और वेदांग ज्योतिष के सर्वथा सानुरूप न होने से जन्मपत्री मिलान का अनौचित्य उन्होंने देखा और वो सही ही देखा है।

स्वामीजी ने लगभग मुनि के वेदांग ज्योतिष अनुसार ही नक्षत्रों को लिया है और ऐसा लगभग सभी ने किया है। गणितीय कठिनाई के कारण २८ असमान नक्षत्रों को, स्वामीजी ही क्या, किसी ने भी नहीं लिया है। तो महर्षि ने भी केवल २७ ही नहीं अपितु सभी नक्षत्रों का (अन्यों की भान्ति) परस्पर समान होना ही लिया है। 'पॉपुलर हिन्दू एस्ट्रॉनमी' नामक डॉ गोरख प्रसाद जी की पुस्तक में स्वयं श्री एन सी लाहिरी ने इसका रहस्योद्घाटन किया है।

अब तो बहुत कुछ और भी अच्छी तरह से सार्वजनिक हो चुका है। भारत सरकार की कैलेण्डर रिफार्म कमेटी की रिपोर्ट में सभी नक्षत्रों के भोगांश और उनके साथ प्रत्येक की योग तारा स्पष्ट की गयी है।

स्वामी ब्रह्मानंद सरस्वती जी गुरुकुल बड़लूर वालों ने तो यहां तक कहा है, "जो व्यक्ति नक्षत्रों को समान कहे समझ लो कि उसने नक्षत्रों को देखा ही नहीं है।...

यहां मैं आपको लाहिरी जी की कथनी और उनकी करनी का स्पष्ट अंतर दिखाने वाले उनके कुछ वचन भी याद दिलाना चाहूंगा "....भारत में वैदिक काल से ही क्रांतिवृत्तीय तारे २८ भागों में विभक्त थे। उनको नक्षत्र या चांद्र भवनों के नाम से जाना गया है। इन तारा पुंजों में अलग-अलग परिक्षेत्र क्रान्ति वृत्तीय सन्दर्भ से असमान क्षेत्र के नहीं हैं क्योंकि उनका प्रकृतिगत मौलिक विभाजन असमान ही है। हमें भास्कराचार्य के कायोप में इन असमान विभाजनों का वर्णन प्राप्त है।....." (उनके अंग्रेजी कथन का ये हिन्दी अनुवाद मेरा है।

मुख्य बिन्दु पर आते हुए मुझे कहना है कि ऋग्वेद में २८ नक्षत्र हैं और अथर्ववेद में उनको नामित भी किया गया है। अथर्व वेद के इस सूक्त का नाम ही नक्षत्र सूक्त है। स्वामी जी को अपने जीवन के अन्त में लेकिन इस बात का पूरा ज्ञान हो गया था कि पंचांगों में घाल मेल है और इसी से उन्होंने 'हम आर्यों का अपना पंचांग होना चाहिए' इस एक बात के लिए प्रयास शुरू कर दिए थे। उनकी इस सोच को (जुलाई १८८३) कार्य रूप में परिणित होने का अवसर नहीं मिल पाया। उसी वर्ष, इसके दूसरे ही महीने (३०-९-१८८३) में उनका जीवन पूर्ण हो गया (अधिक और स्पष्ट जानकारी के लिए कृपया इस वर्ष का वैदिक पंचांग श्री मोहन कृति आर्ष पत्रकम् का कवर पृष्ठ २ देखें)

अस्तु, आपके प्रश्न के उत्तर के माध्यम से मैं देश के प्रत्येक वैदिक जन से कहना चाहता हूँ कि उनका नैतिक ही नहीं परम कर्तव्य बनता है कि वे पंचांग सुधार को महर्षि की अंतिम अपूर्ण इच्छा समझकर श्रद्धेय स्वीकार्यता प्रदान करें। मेरा और मेरे पूर्वजों को इस बात का श्रेय जाता है कि मुझे उनकी इस इच्छा पर उस एक कार्य को पूर्ण करने का सौभाग्य मिला है जो आर्य समाज की इतनी लम्बी उम्र के बावजूद अभी तक नहीं हो पाया था। स्वस्ति ओं शम्। ●

गुरुकुल केहलारी का वार्षिकोत्सव सम्पन्न

वेदयोग महाविद्यालय गुरुकुल आश्रम के १२ वर्ष पूर्ण होने पर दिनांक १० से १२ अक्टूबर को गायत्री महायज्ञ एवं वैदिक सम्मेलन धूमधाम से मनाया गया। भारतवर्ष से पधारे अनेक वैदिक विद्वानों व भजनोंपदेशकों ने अपने उपदेश-भजन के माध्यम से श्रोताओं को भाव विभोर कर दिया। पं. प्रतापसिंह जी आर्य, श्री काशीराम जी अनल, स्वामी अमलानन्द जी आदि ने भजनों के माध्यम से नई दिशा प्रदान की दिनांक १० को कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डॉ दिलीप हिन्दूजा जी ने बिगड़ती संतान और समाधान विषय पर प्रभावशाली व्याख्यान दिया। आज के वर्तमान युग में केवल भौतिकवादिता रह गई और माता-पिता बच्चों के निर्माण कार्य पर ध्यान नहीं दे रहे हैं, वही संतान बड़ी होकर माता-पिता तथा अपनों से बड़े लोगों की आज्ञा का पालन नहीं करती। उन्होंने कहा संतान निर्माण यदि चाहते हो तो अपने बच्चों को गुरुकुल में प्रवेश कराएं जिससे वे आगे चलकर एक अच्छे नागरिक बन सकें।

दिनांक ११ को विद्वानों ने छुआछूत, जातिवाद तथा सामाजिक विषयों पर अपने-अपने विचार व्यक्त किए। जातिवाद से आज देश को कितनी हानि पहुंच रही है जिसका समाधान ढूंढना मुश्किल हो रहा है, आज यदि हम एक होकर वेद की आज्ञा संगच्छध्वं स वदध्वं को माने तो इसका समाधान निश्चित है आदि विचार व्यक्त किए।

दिनांक १३ को मेरा राष्ट्र-मेरा धर्म विषय पर सभी विद्वानों ने और गुरुकुल के आचार्य डॉ. सर्वेश जी ने भी अपने उद्गार व्यक्त किए जो देश विश्व गुरु की उपाधि से विभूषित था, जिसे सोने की चिड़िया कहा जाता था, आज वह भारत देश बहुत निम्न स्तर पर आ गया है। भाषावाद, जातिवाद, सांप्रदायिकतावाद, आरक्षण, फिल्मी दुनिया जैसी तमाम इन मुद्दों ने इसका पतन करके रख दिया है। यह सभी विचारणीय मुद्दे और बातें हमको सोचनी पड़ेगी और हमको आगे बढ़ना होगा। वेद की आज्ञा मनुर्भव का पालन करना होगा। महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत सत्यार्थ प्रकाश का स्वाध्याय करना होगा। इत्यादि विचारों से श्रोताओं को लाभान्वित किया साथ ही विदिशा से पधारे राजकुमार जी, सुरेंद्र जी आर्य वीर दल शिक्षकों द्वारा गुरुकुल के ब्रह्मचारीयों को सर्वांग सुन्दर आसन, लाठी, मलखंब, सूर्य नमस्कार, स्तूप, कराटे आदि प्रस्तुत किये। गुरुकुल के सचिव अनिलदेव शास्त्री जी ने बहुत ही सरलता के साथ मंच संचालन किया। खण्डवा से भानुभाई श्रीमती लताबेन पटेल, अजमेर से आचार्य मूलाराम जी, विदिशा से दिनेश वाजपेई जी, रामकिशोर कासदे जी, जलगांव से चैतन्यकिशन जी रडे, पं. बाजीराव अटाले जी, जालना से पं. संतोष आर्य जी, सुनील जी, लातूर से अशोक आर्य जी, गंज बासोदा से शिवचरण पांचाल जी, बच्चों के अभिभावक इन्दौर से वैदिक संसार पत्रिका के प्रकाशक सुखदेव शर्मा जी, केहलारी गांव व आसपास के क्षेत्रवासियों तथा पत्रकार जावर के शुभम जायसवाल जी ने उपस्थित होकर आयोजन को सफल बनाया। गुरुकुल के आचार्य सर्वेश शास्त्री जी ने सभी का धन्यवाद ज्ञापित किया। ●

समर्पित जीवनियों की शृंखला की एक महत्वपूर्ण कड़ी....

प्रेरणास्पद व्यक्तित्व : श्रद्धेय श्री किशोरीलाल जी गोयल

संक्षिप्त जीवन परिचय

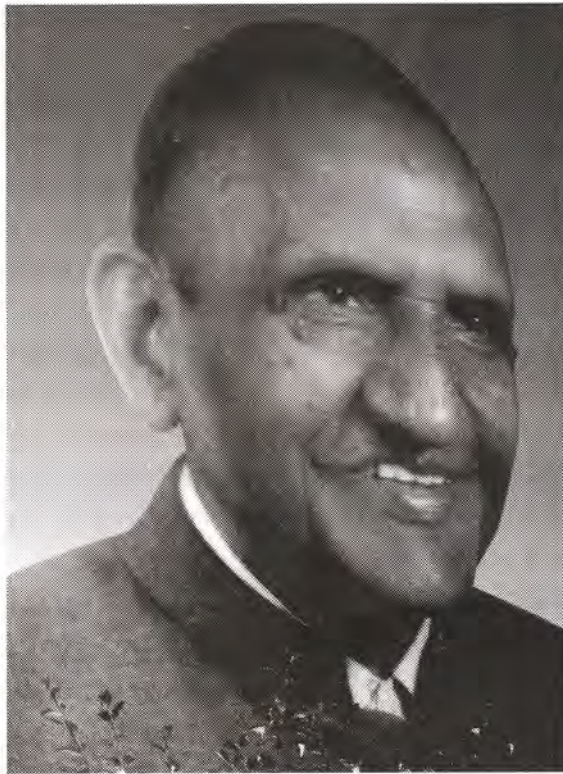
बाल्यकाल से लेकर आयु के ९३ वर्ष तक परोपकाररूपी यज्ञ को समर्पित रहकर मानव समाज रुपी देवता की पूजा करते रहे। इस पूजा के कितने स्वरूप हो सकते हैं यह सब वे जानते हैं, जिन्होंने अनेक वर्षों तक उन्हें अपने बीच में देखा है।

निर्विकार, निर्लिप्त, क्षीण सी काया में परमपिता ने एक ऐसा फौलादी हृदय और बज्र मस्तिष्क दिया था कि वे न तो आपदाओं से कभी विचलित हुए और न कभी संघर्ष की संभावना से अपनी राह बदली। शायद यही कारण हैं जो उन्हें आर्य समाज, राजनीति और अभिभाषक के पेशे से सदा सफलता दिलाता रहा। वे इन सभी क्षेत्रों में अत्यंत गौरवपूर्ण पदों पर पहुँचे कुशलतापूर्वक अपने दायित्वों को निर्वाह किया और फिर अपने उत्तराधिकारियों का निर्माण कर सब कुछ उन्हें सौंप कर मुक्त हो गये।

आपका जन्म ११ मार्च १९१४ को

मन्दसौर जिले की पिपलिया मण्डी स्थान पर हुआ और वही प्राथमिक शिक्षा ग्रहण की। हाईस्कूल की परीक्षा महु से और स्नातक तथा विधि की परीक्षा आपने इन्दौर से उत्तीर्ण की। सन् १९३७ में वकालत प्रारम्भ की वरिष्ठ अभिभाषक राय साहब अयोध्या प्रसाद भार्गव के मार्गदर्शन में। एक वर्ष बाद ही स्वतंत्र रूप से वकालत प्रारम्भ कर दी और फिर उस क्षेत्र में ऐसी प्रतिष्ठा बनी कि अनेक वरिष्ठ और कनिष्ठ अभिभाषक आप से परामर्श और मार्गदर्शन प्राप्त करते रहे। अनेक वरिष्ठ अभिभाषक तो आज तक कृतज्ञ हैं श्री गोयल साहब के क्योंकि उन्होंने आपकी जंगली पकड़कर न्याय मंदिर में प्रवेश किया था। वे इन्दौर अभिभाषक संघ के अध्यक्ष व राज्य अधिवक्ता परिषद के उपाध्यक्ष एवं अनेक वर्षों तक उसकी कार्यकारिणी के माननीय सदस्य और उसकी अनुशासन समिति के प्रभारी रहे।

सन् १९३१ में बरखेड़ा जिला मन्दसौर की श्रीमति मांगीबाई आपकी जीवन संगिनी बनी। सन् १९८५ तक लम्बे और सुखी दाम्पत्य जीवन के बाद वे परलोकगामी हो गई। आपका तीन सुपुत्र श्री विजयप्रकाश जी गोयल, श्री विनोद कुमार जी गोयल तथा श्री दिनेशचन्द्र जी गोयल और चार सुपुत्रियों का भरा-पूरा परिवार है।



सत्यार्थ प्रकाश ने दी जीवन को दिशा -

विधार्थी जीवन में एक बार आपके हाथ लगा महर्षि दयानन्द का सत्यार्थ प्रकाश और उसके अध्ययन ने आपके जीवन को एक नई दिशा प्रदान की। सन् १९३३ में अजमेर में सम्पन्न हुआ महर्षि दयानन्द के निर्वाण का अर्धशदी समारोह। गोयल साहब साहाभर के इस कार्यक्रम में उपस्थित रहे और अनेक ऐसे लोगो के सम्पर्क में आये जिन्होंने महर्षि से प्रत्यक्ष साक्षात्कार किया था। आपने उनका तपस्वी और बलिदानी जीवन देखा। वहां से लौटते ही वे महु में आर्यसमाज के दैनिक कार्यों से जड़ते गये और १९३४ में वे उसके नियमित सदस्य बन गये। आपके प्रयास से वहां प्रारम्भ हुआ नवयुवकों का एक संगठन **आर्यकुमार सभा**, कुछ दिन बाद बना **प्रताप सेवा संघ**। श्री गोयलजी इन दोनों संस्थाओं के मंत्री बनाये गये सन् १९३७ में इन्दौर आने के बाद आर्यकुमार दल ने और सन् १९४० में आर्यसमाज मल्हारगंज ने आपको अपना

प्रधान बनाया।

यह तो था इस यात्रा का शुभारंभ। सन् १९४० में ही आपके नेतृत्व में सम्पन्न हुआ इन्दौर में अखिल भारतीय आर्यकुमार सभा का सम्मेलन। दिन-रात अपने सहयोगियों के साथ प्रयत्न करके श्री गोयलजी ने उसे एक अत्यंत सफल आयोजन बना दिया और दिल्ली से पधारे सभा के अ.भा.प्रधान डॉ. युद्धवीरसिंह जी ने सम्पूर्ण आयोजन की भूरि-भूरि प्रशंसा की। आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध नेता पं. सुरेन्द्र जी शास्त्री जो आगे स्वामी ध्रुवानन्द के नाम से विख्यात हुये इस अवसर पर विशेष रूप से उपस्थित थे।

दयानन्द का वैदिक मिशन -

मध्य भारत में आर्य समाज के प्रचार-प्रसार के लिये इन्दौर में दयानन्द वैदिक मिशन नाम से एक संस्था बनी और एक साप्ताहिक पत्र का **आर्यावर्त्त** के नाम से प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। इसमें भी श्री गोयलजी ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। वे मिशन के मंत्री बनाये गये और अनेक स्थानों पर उन्होंने प्रचार-प्रसार के लिये प्रवास किया। मिशन के अनेक महत्वपूर्ण कार्यों में आगर के बलाई समाज के अनेक बन्धुओं को ईसाइयों द्वारा बहुत बड़ी मात्रा में धर्मान्तरित किया जा चुका था को वापसी समाज में

लाना था। यह कठिन साध्य एवं खतरों भरा काम था। किन्तु पं. वीरसेनजी वेदश्रमी के साथ श्री गोयलजी ने इस चुनौती को स्वीकार किया और यज्ञों के माध्यम से उनकी शुद्धि कर उनकी घर वापसी की।

महेश्वर का गुरुकुल -

इसी बीच निमाड़ के एक अत्यंत पुराने और बन्द पड़े हुये गुरुकुल का आपने महेश्वर में पुनरूद्धार किया। जिले के अनेक समाज सेवी व्यक्तियों को बुलाकर और उनसे चर्चा करके उसकी व्यवस्था की और गुरुकुल ज्वालापुर के स्नातक पं. लक्ष्मीनारायण जी शास्त्री को उसका मुख्याधिराता नियुक्त किया।

आपकी प्रेरणा से बनारस में सन् १९४६ में सम्पन्न हुये आर्यवीरदल के अ.भा. प्रशिक्षण में इन्दौर से सात युवकों ने भाग लिया। प्रशिक्षण का परिणाम यह हुआ कि आर्यवीर दल का कार्य इन्दौर में तेजी से बढ़ा और नगर में पांच शाखाएं हो गई।

सांवेर प्रकरण -

इन्दौर जिले के सांवेर प्रकरण को सुलझाने में आपको दोहरी सफलता मिली। वहां के एक पूर्व जागीरदार के आधिपत्य वाले श्यामाबाई स्मारक को मुसलमानों ने श्यामाबाई की मस्जिद बताकर सन् १९४४ में वहां नमाज अदा करने की योजना बनाई। इससे हिन्दू समाज भड़क उठा। दो समाजों में संघर्ष की स्थिति बन गई। श्री गोयलजी ने अपने साथियों के साथ वहां पहुँचकर वहां के हिन्दुओं द्वारा मुसलमानों का बहिष्कार प्रारम्भ करवा दिया। जिससे आस-पास के ग्रामों से दूध लाकर यहां व्यवसाय करने वाले मुसलमान कुछ ही समय में शरणागत हो गये और उधर प्रशासन द्वारा प्रकरण हातोद कोर्ट में दिये जाने पर एक अच्छे वकील की तरह आपने प्रकरण की पैरवी की और दो वर्ष में ही दीवानी और फौजदारी दोनों मुकदमे जीतकर स्थान पर आधिपत्य पूर्व जागीरदार को दिला दिया।

हिन्दू महासभा का कार्य -

इन्दौर में चालीस के दशक में हिन्दू महासभा का कार्य तेज गति से बढ़ रहा था। अपनी हिन्दू विचारधारा के कारण श्री गोयलजी हिन्दू महासभा के साथ जुड़े और कुछ समय में ही आप नगर के मंत्री बनाये गये। श्री गणेश वामन ओक आपके प्रमुख सहयोगी और संयुक्त मंत्री थे। दोनों के सफल प्रयास से इन्दौर में हिन्दू महासभा का प्रांतीय सम्मेलन तय हुआ। इसका निमंत्रण लेकर आप दोनों श्री सावरकर जी से मिलने गये और उन्होंने यहां पधारने की स्वीकृति दी। रेल्वे स्टेशन के पास ही एक भव्य पाण्डाल में श्री सावरकर जी का कार्यक्रम हुआ और विशाल शोभायात्रा भी निकाली गई। इन्दौर के इतिहास में यह एक स्वर्णिम, अविस्मरणीय, ऐतिहासिक आयोजन था।

मध्यभारत में जनसंघ के संस्थापक -

सन. १९५१ में देश के कुछ अन्य प्रांतों की भांति मध्य भारत में भी यह चर्चा प्रारम्भ हुई की राष्ट्रीय विचारधारा के लोगो का प्रांत में एक अलग राजनैतिक दल हो। माननीय श्री मनोहरराव जी मोघे और तात्या साहब दातार

के साथ चर्चा होकर इन्दौर में प्रांत के कुछ प्रमुख कार्यकर्ताओं का सम्मेलन आयोजित हुआ। लम्बी चर्चा के बाद यहां भारतीय जनसंघ प्रारंभ करना तय हुआ। बड़नगर के श्रद्धेय बद्रीलालजी प्रांत के अध्यक्ष और श्री मनोहरराव जी मोघे प्रांत के मंत्री बनाये गये। इन्दौर के अध्यक्ष पद पर मनोनित हुए श्री गोयलजी और उन्हें अपनी कार्यकारिणी बनाने का अधिकार दिया गया। दिल्ली और पंजाब के बाद इस प्रकार जनसंघ का कार्य मध्य भारत प्रांत में प्रारम्भ हुआ। कुछ समय बाद ही दिल्ली में जनसंघ के अ.भा. संगठन का निर्माण हुआ और डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी प्रथम अध्यक्ष बने। प्रांत में नये चुनाव हुये और गोयलजी को सन् १९५३ में मध्य भारत प्रांत का दायित्व सौंपा गया। सन् १९५६ में म.प्र. के बनने पर वे मध्यप्रदेश जनसंघ के पहले अध्यक्ष सर्वानुमति से बने। प्रदेश में कार्य विस्तार के लिए उस समय आपने खूब प्रयास किया। एक बार तो लम्बा प्रवास २० दिन तक का रहा। १९६५. ६७ में भी आप प्रांतीय अध्यक्ष रहे।

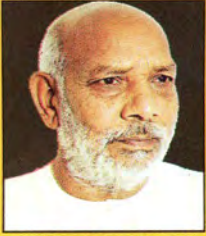
सन् १९५२ में आप जनसंघ की ओर से विधानसभा का और सन् १९५७ में लोकसभा का चुनाव भी लड़े। विभिन्न आंदोलनों में अनेक बार जेल यात्राये भी की। एक बार दिल्ली की सेंट्रल जेल में और पांच बार म.प्र. की विभिन्न जेलों में रहे। आपातकाल में १९ माह इन्दौर के कारागार में आप बंद रहे।

श्रद्धानन्द अनाथालय -

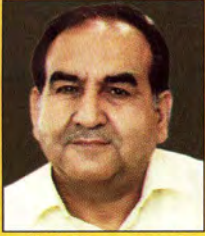
अपने व्यस्त राजनैतिक जीवन और अभिभाषक पेशे के बावजूद भी श्री गोयल साहब आर्य समाज के माध्यम से समाज सेवा से जुड़े रहे। संयोगितागंज में एक छोटा सा मकान किराये पर लेकर उन्होंने श्रद्धानन्द अनाथालय का शुभारम्भ किया। बाद में शासन से प्राप्त भूखण्ड पर उसके अपने विशाल भवन का निर्माण श्री गोयल साहब के प्रयत्न से ही संभव हो सका। वे ४० वर्ष तक निरंतर उसके अध्यक्ष भी रहे। इस अवधि में संस्था ने जो स्वरूप लिया है व अपने आप में एक उदाहरण है। आज विशाल श्रद्धानन्द भवन में अनाथालय और निराश्रित बालक गृह श्रद्धानन्द बाल आश्रम के नाम से संचालित हो रहा है, जिसके अध्यक्ष आपके ज्येष्ठ सुपुत्र हैं। इसी भवन में नगर आर्य समाज, कोठारी मार्केट का भी संचालन किया जाता है जिसके वर्तमान प्रधान आपके ज्येष्ठ सुपुत्र हैं जो की मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा के अंतरंग सदस्य भी हैं। आपके सुपुत्र भी आपके अनुगामी होकर मनुर्भव जनया देव्यं जनम् को सार्थक कर रहे हैं।

श्री गोयल साहब की साधना के अनेक आयाम हैं। प्रभु कृपा से उन्हें अपने सभी प्रयासों में सफलता भी मिली और यश भी। ९० वर्ष की आयु में एक भयानक दुर्घटना में अस्थि भंग के बाद पूर्ण स्वस्थ होकर मृत्यु पर्यन्त अपना दैनन्दिन जीवन बड़े आनन्द के साथ आपने व्यतीत किया और अनेक लोगो के प्रेरणा के केन्द्र बने। ९३ वर्ष की आयु में आपका देहावसान मकर संक्रान्ति के दिन १४ जनवरी २००७ को हुआ। आपकी तेरहवीं पुण्यतिथि पर वैदिक संसार परिवार अपने श्रद्धासुमन अर्पित करता है तथा आपकी दिवंगत शत-शत नमन करता है। ●

वैदिक संसार के सम्माननीय संरक्षक महानुभाव



ठा. विक्रमसिंह जी आर्य
अध्यक्ष
राष्ट्र निर्माण पार्टी, दिल्ली



श्री नेमीचन्द जी शर्मा
भामाशाह-राज सरकार
गान्धीधाम (गुजरात)



श्री पूनाराम जी बरनेला
बरनेला चेरिटेबल ट्रस्ट
जोधपुर (राजस्थान)



श्री रामफलसिंह जी आर्य
प्रा. वरिष्ठ उपप्रधान
सुन्दर नगर (हिमाचल प्रदेश)



अधि. रतनलाल जी राजौरा
उपमन्त्री-आर्य समाज
निम्बाहेड़ा (राजस्थान)



श्री नरेश जी जांगिड
वरिष्ठ समाजसेवी
जोधपुर (राजस्थान)



आ. आनन्द जी पुरुषार्थी
अ. वैदिक प्रवक्ता
होशंगाबाद (म.प्र.)



श्री विनोद जी जायसवाल
वरिष्ठ समाजसेवी
रायपुर (छत्तीसगढ़)



श्री वेदप्रकाश जी आर्य
आई.ओ.सी.एल.
सवाई माधोपुर (राज.)



श्री लेखराज जी शर्मा
टी.पी.टी. कॉन्ट्रेक्टर
भरतपुर (राज.)



श्री सुनील जी शर्मा
जा.ब्रा. प्रदेशाध्यक्ष
पौण्डा (गोवा)



श्री नानूराम जी जांगिड
जा.ब्रा. जिलाध्यक्ष
धुलिया (महाराष्ट्र)



श्री गजानन्द जी जांगिड
जा. ब्रा. जिलाध्यक्ष
जालना (महाराष्ट्र)



श्रीमती सुमित्रा जी शर्मा
योग प्रशिक्षिका
अहमदाबाद (गुजरात)



श्री अर्जुन जी झलोया
वरिष्ठ समाजसेवी
मन्दसौर (म.प्र.)



श्री चैतन्य किशन जी रडे
वरिष्ठ समाजसेवी
भुसावल (महाराष्ट्र)



श्री ओमप्रकाश जी शर्मा
वरिष्ठ समाजसेवी
आगरा (उ.प्र.)



सुश्री अंजलि आर्या
वैदिक भजनोपदेशिका
घरौडा, (हरियाणा)



श्री सांवरमल जी शर्मा
वास्को डी गामा, गोवा



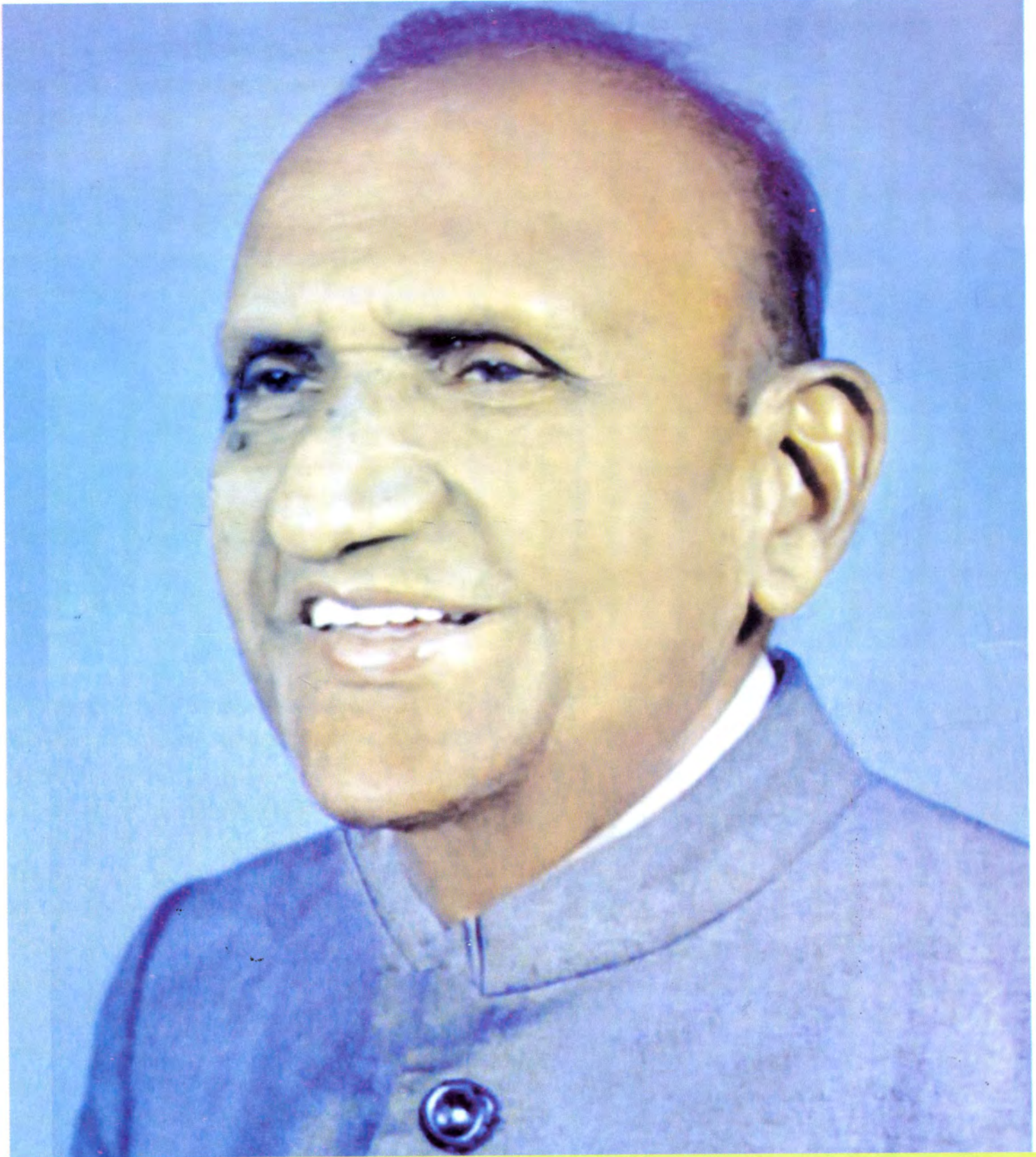
आ. सर्वेश सिद्धान्ताचार्य
गुरुकुल केहलारी (म.प्र.)



श्री रमेशचन्द्र जी दीक्षित
गाधी, बागपत (उ.प्र.)

आर्य समाज, मल्हारगंज (इन्दौर) पर महर्षि दयानन्द निर्वाणोत्सव समारोहपूर्वक सम्पन्न हुआ





प्रेरणास्पद व्यक्तित्व : श्रद्धेय श्री किशोरीलाल जी गोयल

श्रद्धावनत -

तेरहवीं पुण्यतिथि 14 जनवरी पर शत-शत नमन

विजयप्रकाश गोयल, विनोदकुमार गोयल, दिनेशचन्द्र गोयल एवं समस्त परिवारजन तथा स्नेहिजन

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक - सुखदेव शर्मा, इन्दौर द्वारा इन्दौर ग्रफिक्स २४, कुंवर मण्डली, से मुद्रित एवं १२/३, संविद नगर, इन्दौर - १८ से प्रकाशित